

दशदश

आज लालमयीराम जैन, मित्रेतिम
होगदर, मित्रमग्न लालमयीराम,
मग्न विन्दी गुरुनक गिरना, मग्न
मग्न, गुरुनक गिरना, मित्र मग्न,
विन्दी ।

दश लालमयीराम गुरुनक के मग्न है ।

दश

आज लालमयीराम जैन
मग्न, मित्रमग्न लालमयीराम,
मग्न विन्दी गुरुनक गिरना, मग्न
मग्न, गुरुनक गिरना, मित्र मग्न,
विन्दी ।

दश

रानी सारन्धा

(१)

अंधेरी रात के सझाटे में धमान नदी चट्टानों से टकराती हुई तेसी गुहावन्ती मालूम होती थी जैसे घुमुर घुमुर करती हुई चकियाँ । नदी के दाहिने तट पर एक टीला है । उस पर एक पुराना दुर्ग बना हुआ है जिसको जंगली वृक्षों ने घेर रखा है । टीले के पूरें की ओर एक छोटा-सा गांव है । यह गढ़ी और गांव दोनों एक बुन्देला सरदार के कीर्ति-चिन्ह हैं । शताब्दियाँ व्यतीत हो गईं, बुन्देलखण्ड में कितने ही राज्यों का उदय और अस्त हुआ, मुमलमान आये और गये, बुन्देला राजा उठे और गिरे—कोई गांव, कोई इलाका ऐसा न था जो इन दुर्ब्यवस्थाओं में पीड़ित न हो, मगर इस दुर्ग पर किसी शत्रु की विजय-पताका न लहराई और इस गांव में किसी विद्रोह का भी वदार्पण न हुआ । यह उसका मौभाग्य था ।

अनिरुद्धसिंह कीर राजपूत था । यह जमाना ही ऐसा था जब मनुष्यमात्र को अपने बाहु-बल और पराक्रम ही का भरोसा था । एक और मुमलमान सेनापति पैर जमाये खड़ी रहती दूसरी ओर बलवान राजा अपने निर्बल भाइयों का गला बंद, तथैव रहते थे । अनिरुद्धसिंह के पास सवारों और

रानी सारन्धा

(१)

अंधेरी रात के मझाटे में धमान नदी चट्टानों में टकराती हुई ऐसी गुहावनी मालूम होती थी जैसे बुझ बुझ करती हुई अकियां । नदी के दाहिने तट पर एक टीला है । उस पर एक पुराना दुर्ग बना हुआ है जिसको जंगली वृक्षों ने घेर रखा है । टीले के पूरे की ओर एक छोटा-सा गांव है । यह गढ़ी और गांव दोनों एक बुन्देला मगदार के कीर्ति-चिन्ह हैं । शताब्दियां व्यतीत हो गईं, बुन्देलखण्ड में कितने ही राज्यों का उदय और अस्त हुआ, मुमलमान आये और गये, बुन्देला राजा उठे और गिरे—कोई गांव, कोई इलाका ऐसा न था जो इन दुर्न्यवस्थाओं में पीड़ित न हो, मगर इस दुर्ग पर किसी शत्रु की विजय-पनाका न लहगाई और इस गांव में किसी विद्रोह का भी पदार्पण न हुआ । यह उसका सौभाग्य था ।

अनिरुद्धमिह वीर राजपूत था । यह समाना ही ऐसा था जब मनुष्यमात्र को अपने बाहु-बल और पराक्रम ही का भरोसा था । एक ओर मुमलमान सेनाएं पैर जमाये खड़ी रहती थीं, दूसरी ओर बलवान् राजा अपने निर्यत्न भाइयों का गला घोटने पर तयार रहने में । अनिरुद्धमिह के पाग सवारों और

प्रवेश किया। यह अनिच्छा था। उसके कपड़े भीगे हुए थे, और
बदन पर कोई हथियार न था। शीतला बारपाई से उतर कर
झुंझ पर बैठ गई।

सागरजी ने पूछा—भैया, यह क्यों भीगे क्यों हैं ?

कमिन्धु—जरी नेर कर आया हे ।

प्रश्न—कृपया कया हल ?

अभिप्रेत—विशेष गति ।

सारांश—यौग साधक का आदर्श ?

अ. १८३—मरणे की वृत्ति पाई ।

रही। जहाँ से नदी अगान से बहा—इंभार ने ही पुराल किया ।
अगर मारम्भा के तीव्रता पर बल पड़ गये और मुख्यमन्त्रित गये
से मने ह हामया । बाँधी—नेवा, तुमने तुल की मयादा ओ रही ।
नेवा कभी न हुआ था ।

मादरूपा भाई पर प्रान्तवर्ती था। उसने मुँह से यह पिक्कार सुनकर अचानक अपना और सारा परिवार छोड़ दिया था। वह दूरगामी, फिर कुछ और भी अलग अनुमान न बचा लिया था, फिर प्रत्यक्ष हो गई। वह कबल पाव लौटा और वह वह सब कहकर चला गया—“मादरूपा सुनने मुझे लदेव के लिए से वह वह दिया वह बात मुझे कभी न भूलोगी।”

[illegible]

विवाह कर दिया। सारन्धा ने मुंह-मांगो मुराद पाई। उसकी यह अभिलाषा कि मेरा पति बुन्देला जाति का कुल-तिलक हो, पूरी हुई। यद्यपि राजा के रानियाम में पांच रानियां थी, मगर उन्हें शीघ्र ही मालूम हो गया कि वह देवी, जो हृदय में मेरी पूजा करती है, सारन्धा है।

परन्तु कुछ ऐसी घटनाएं हुई कि चम्पतराय को मुगल बाद-शाह का आश्रित होना पड़ा। वे अपना राज्य अपने भाई पहाड़-मिह को सौंपकर दिल्ली चले गये। यह शाहजहां के शामन-काल का अन्तिम भाग था। शाहजारा दाराशिकोह राजकीय कार्यों को संभालते थे। युवराज की आगों में शील था और चित्त में उदारता। उन्होंने चम्पतराय की वीरता की कथाएं सुनी थी, इस लिए उनका बहुत आदर-सम्मान किया, और कालपी की बहु-मूल्य जागीर उनको भेंट की, जिसकी आमदनी नौ लाख थी। यह पदना अवसर था कि चम्पतराय को आठे दिन के लड़ाई-झगड़े में निवृत्ति मिली और उनके साथ ही भोग-विलास का प्रायज्य हुआ। रात-दिन आमोद-प्रमोद की चर्चा रहने लगी। राजा-विलास में डूबे, रानियां जड़ाऊ गहनों पर रीझीं। मगर सारन्धा इन दिनों बहुत उदास और संकुचित रहती। वह इन रहस्यों से दूर-दूर रहती। ये नृत्य और गान की सभाएं उसे मूर्त प्रताप होतीं।

एक दिन चम्पतराय ने सारन्धा से कहा—सारन, तुम उदास क्या रहती हो? मैं तुम्हें कभी हमने नर्तन देखना। क्या तुम मे नाराज हो ?

सादराह के सामने आज आप आदर से मिल मुझने हैं यह कल आपके नाम से कांपता था । रानी से चेरी होकर भी प्रमत्त-चित्त होना मेरे घरा में नहीं है । आपने यह पद और विलास की सामग्रियां बड़े महंगे दामों मोल ली हैं ।

चम्पतराय के नेत्रों पर से एक पर्दा-मा हट गया । वे अब तक सारन्धा की आत्मिक उग्रता को न जानने थे । जैसे ये-मां-बाप का बालक मां की चर्चा सुनकर रोने लगता है, उसी तरह ओरछे की याद से चम्पतराय की आंखें सजल हो गईं । उन्होंने आदरयुक्त अनुराग के साथ सारन्धा को हृदय से लगा लिया ।

आज से उन्हें फिर उसी उजड़ी बस्ती की निजक हुई जहां से धन और कीर्ति की अभिलाषाएं सींच लाई थी ।

मा अपने खोये हुए बालक को पाकर निहाल हो जाती है । चम्पतराय के आने से मुन्देसखण्ड निहाल होगया । ओरछा के भाग जागे । नौचतें झड़ने लगी और फिर सारन्धा के नेत्र-कमलों में जातीय अभिमान का आभास दिमाई देने लगा ।

यहां रहते-रहते महीने बीत गये । इस बीच में शाहजहां घीमार पड़ा । पहले से ईर्ष्या की अग्नि दहक रही थी । यह खबर सुनते ही ज्वाला प्रचण्ड हुई । सधाम की नीयारिया होने लगी । शाहजहां मुराद और मुहीउद्दीन अपने-अपने दल सजा कर दक्खिन से चले । वर्षा के दिन थे । उर्वरा भूमि रग-धिरग के रूप भर कर अपने सौन्दर्य को दिखाना थी ।

मुराद और मुहीउद्दीन उमंगों में भरे हुए उदम बढ़ाने चले

किन्ने से युन्देलों की एक काली घटा उठी और बंग के माथ चम्बल की तरफ चली । प्रत्येक मिवाही घोर-रम में भूम रहा था । सारन्धा ने दोनों राजकुमारों को गले में लगा लिया और राजा को पान का पीड़ा देकर कहा—युन्देलों की लाज अब आपके हाथ है ।

आज डमका एक-एक अंग सुनकरा रहा है और हृदय द्रुन-मित है । युन्देलों की यह सेना देखकर शाहशादे कृने न ममाये । राजा वहाँ की अंगुल अंगुल भूमि में परिचित थे । उन्होंने युन्देलों को तो एक आड़ में छिपा दिया और शाहशादों की गौज को सजा कर नदी के किनारे-किनारे पश्चिम की ओर चले । दारा शिकोह को धम हुआ कि शत्रु किसी अन्य घाट से नदी उतरना चाहता है । उन्होंने घाट पर से मोर्चे हटा लिये । घाट में बैठे हुए युन्देले इसी ताक में थे । बाहर निकल पड़े और उन्होंने तुरन्त ही नदी में घोड़े डाल दिये । चम्पतराय ने शाह-बादा दारा शिकोह को भुलावा देकर अपनी गौज घुमा दी और वह युन्देलों के पीछे चलता हुआ उसे पार उतार लाया । इस कठिन चाल में सात घण्टों का विलम्ब हुआ; परन्तु जाकर देखा तो मात सौ युन्देलों की लाशें तड़प रही थी ।

राजा को देखते ही युन्देलों की हिम्मत बध गई । शाहशादों की सेना ने भी 'अज्ञाहो अकबर' की ध्वनि के साथ धावा किया । बादशाही सेना में हलचल पड़ गई । उनकी पंक्तियाँ क्षिप्त-भिन्न हो गई, हाथों-हाथ लड़ाई होने लगी, यहा तक कि गम हो गई । रखभूमि रुधिर से लाल हो गई और आकाश

अंग मांघे में डला हुआ, मिह की-भी छाती; चीते की सी कमर, उसका यह प्रेम और स्वामी-भक्ति देखकर लोगों को बड़ा मुनूहल हुआ। राजा ने आज्ञा दी—रायबंदार ! इस प्रेमी पर कोई हथियार न चलाये, इसे जीता पकड़ लो, यह मेरे अस्तबल की शोभा बढ़ायेगा। जो इसे मेरे पास लायेगा, उसे धन में निहाल कर दूंगा।

योद्धागण चारों ओर से लपके; परन्तु किसी को साहस न होता था कि उसके निकट जा सके। कोई चुमकारता था, कोई कन्धे में फँसाने की क्रिक में था। पर कोई उपाय संकलन न होता था। वहाँ सिपाहियों का मेला-मा लगा हुआ था।

तब मारन्धा अपने खूँने से निकली और निर्भय होकर घोड़े के पास चली गई। उसकी आंखों में क्रोध का प्रकाश था, हल का नहीं। घोड़े ने मिर मुका दिया। रानी ने उसकी गर्दन पर हाथ रखा, और वह उसकी पीठ मुहलाने लगी। घोड़े ने उसके अग्रज में मुँह छिपा लिया। रानी उसकी रास पकड़ कर खेमे की ओर चली। घोड़ा इस तरह चुपचाप उसके पीछे चला, मानो मर्दव से उसका मेयक हो।

पर बहुत अच्छा होता कि घोड़े ने मारन्धा से भी निष्ठुरता की होती। वह सुन्दर घोड़ा आगे चलकर इस राज-परिवार के निरद स्वर्णवटिन मृग मिद्ध हुआ।

समाप्त एक रंग लय ४ इस मैदान में उमा सेनापति को

विजय-श्रीम होना है जो अक्सर का रज-वानना है वह अक्सर

को उसके बहुमूल्य कृत्यों के उपलब्ध में बारह हजारी मनमय प्रदान किया। औरछा से बनारस और बनारस से जमुना तक उसकी जागीर नियत की गई। बुन्देला राजा फिर राज-मेवक बना, वह फिर सुख-विलास में डूबा और रानी मारन्धा फिर पराधीनता के शोक में घुलने लगी।

बलीबहादुरस्वामी बड़ा धार्मिक-चतुर मनुष्य था। उसकी सुदृढ़ता ने शीघ्र ही उसे बादशाह आलमगीर का विश्वास-पात्र बना दिया। उस पर राज-सभा में सम्मान की दृष्टि पड़ने लगी।

स्वामीसाहब के मन में अपने घोड़े के हाथ में निकल जाने का बड़ा शोक था। एक दिन कुंवर छत्रमाल उसी घोड़े पर सवार होकर मौर को गया था, वह स्वामीसाहब के महल की तरफ उ निकला। बलीबहादुर ऐसे ही अचमर की गार्क में था। उसने तुरंत अपने सेवकों को इशारा किया। राजकुमार अकेला क्या करना? पाँच-पाँच घर आया और उसने मारन्धा से सब समाचार बर्णन किया। रानी का चेहरा तमतमा गया। बोली—“मुझे इसका शोक नहीं कि घोड़ा हाथ में चला गया, शोक इस बात का है कि मैं उसे खोजकर जीता क्यों लौटा? क्या मेरे शरीर बुन्देलों का रक्त नहीं है? घोड़ा न मिलना न गहरी, किन्तु मुझे दिखा देना चाहिये या कि एक बुन्देला आलम में चला गया और लौटने लेना हमी नहीं है।

बह कद कर अपने स्वामी बादशाह का नेवार हात व आलम का स्वयं अम्न शरण करे और बादशाह के साथ बलीबहादुरस्वामी के निकलने के लिये ११ १ १६३ स्वामीसाहब के

को उसके बहुमूल्य वस्त्रों के उपलब्ध में बारह हजार मजदूर प्रदान किया। औरदा से बनारस और बनारस में अमुना तक उसकी जागीर नियत की गई। युन्देला राजा फिर राज-सेवक बना, वह फिर मुग-बिनाम में दूषा और रानी मांगन्धा निःपराधीनता के शोक में धुलने लगी।

बलीबहादुर खां बड़ा वाक्य-चतुर मनुष्य था। उसकी मृत्यु ने शीघ्र ही उसे बादशाह आलमगीर का विश्वास-पात्र बना दिया। उस पर राज-सभा में सम्मान की दृष्टि पड़ने लगी।

खांसाहय के मन में अपने घोड़े के हाथ में निबल जाने का बड़ा शोक था। एक दिन कुवर छत्रमाल उसी घोड़े पर सवार होकर भैर को गया था, वह खांसाहय के महल की तरफ जा निकला। बलीबहादुर ऐसे ही अवसर की ताक में था। उसने तुरंत अपने सेवकों को इशारा किया। राजकुमार अनेला क्या करता ? पांच-पांच पर आया और उसने मारन्धा से गय ममान-पार वर्णन किया। रानी का चेहरा तमतमा गया। बोली—“मुझे इसका शोक नहीं कि घोड़ा हाथ में चला गया, शोक इस बात का है कि तू उसे खोकर जीना क्यों लौटा ? क्या तेरे शरीर में युन्देलो का रक्त नहीं है ? घोड़ा न मिलना न मही, किन्तु तुम्हें दिव्या देना चाहिए था कि एक युन्देला बालक से उसका घोड़ा छीन लेना हमी नहीं है।”

यह कह कर अपने पक्ष में घोड़ाओं को तैयार होने की आज्ञा दी, स्वयं आस नारन किया और घोड़ाओं के साथ बलीबहादुर खां के निवासस्थान पर जा पहुँची। खांसाहय उसी

रानी—तो फिर इसका निग्रह तलवार से होगा । युद्धेता घोड़ाओं ने तलवारों से मृत ली, और निश्चय था कि दरबार की भूमि रक्त से साधित हो जाय, बादशाह आलमगीर ने रक्त में आकर कहा—रानी माहिदा, आप मिषादियों को रोके । घोड़ा आपको मिल जायेगा, परन्तु इसका मूल्य बहुत देना पड़ेगा ।

रानी—मैं उसके लिए अपना सर्वस्व देने को तैयार हूँ ।

बादशाह—जागीर और मनसब भी ?

रानी—जागीर और मनसब कोई चीज नहीं ।

बादशाह—अपना राज्य भी ?

रानी—हां, राज्य भी ।

बादशाह—एक घोड़े के लिए ?

रानी—नहीं, उस पदार्थ के लिए जो संसार में सबसे अधिक मूल्यवान् है ।

बादशाह—यह क्या है ?

रानी—अपनी आन ।

इसी भांति रानी ने घोड़े के लिए अपनी विम्वृत जागीर, सब राज-पद और राज-सम्मान सब हाथ से खोया और केवल इतना ही नहीं, भविष्य के लिए काटे बोये । इस घड़ी में अन्त दशा तक चम्पतराय को शान्ति न मिला ।

राजा चम्पतराय ने फिर ओरछा के किने में पदार्पण किया । उन्हें मनसब और जागीर के हाथ से निकल जाने का अव्यक्त शोक हुआ, किन्तु उन्होंने अपने मन में शिकायत का

सदैव उनके साथ रहती और उनका माहम बढ़ावा करती। बड़ी-बड़ी आपत्तियों में जब पैरें लुप्त हो जाना—और आशा साथ छोड़ देना—आत्म-रक्षा का धर्म उसे संभाले रहता था। तीन साल के बाद अन्त में बादशाह के सूबेदारों ने आलमगीर को सूचना दी कि इस रोग का शिकार आपने भिवाय और किसी से न होगा। उत्तर आया कि मेना को हटा लो और घेरा उठा लो। राजा समझा कि मरुट में निष्पत्ति हुई, पर वह धान शीघ्र ही भ्रमात्मक मिट्ट हो गई।

(७)

तीन सप्ताह में बादशाही मेना ने ओरछा घेर रखा है जिस तरह कठोर वचन हृदय को छेद डालते हैं, वही तर तोपों के गोलों ने दीवारों को छेद डाला है। किले में २० हथिया आदमी घिरे हुए हैं, लेकिन उनमें आधे से अधिक स्त्रियाँ और उनसे कुछ ही कम बालक हैं। मर्दों की मरुटा दिनों-दिन न्य होती जाती है। आने-जाने के मार्ग चारों तरफ से बन्द हैं हवा का भी गुजर नहीं। रमद का सामान बहुत कम रह गया है। स्त्रियाँ पुरुषों और बालकों को जीवित रखने के लिए आप उपवास करती हैं। लोग बहुत हताश हो रहे हैं। औरतें मर्य नारायण की ओर हाथ उठा-उठा कर शत्रु को कोसती हैं। बालक-घृन्द मारें क्रोध के दीवारों की आड़ में उन पर पत्थर फेंकते हैं, जो मुश्किल में दीवार के उम पार जा पाते हैं। राजा चम्पन-राय स्वयं उबर में पीछित है। उन्होंने कई दिन से चारपाई नहीं

करती आज बचाना पोर नोचना है । मैं ऐसी स्वतन्त्र हो गई हूँ ? मैंने पचास विचार किये हुए हैं । मैंने सोचा कि इन आदमियों का क्या न किया जायगा तब तो आदमी बचने न होगी ।

राजा—मैंने

माग्य

राजा

छत्रसाल—हम आज रात को छापा मारेंगे ।

रानी ने संक्षेप में अपना प्रस्ताव छत्रसाल के सामने उप-
स्थित किया और कहा—यह काम किसे सौंपा जाय ?

छत्रसाल—मुझ को ।

‘तुम इसे पूरा कर सकोगे ?’

‘हां, मुझे पूर्ण विश्वास है ।’

‘अच्छा जाओ, परमात्मा तुम्हारा मनोरथ पूरा करे ।’

छत्रसाल जब चला तो रानी ने उसे हृदय में लगा लिया
और तब आकाश की ओर दोनों हाथ उठाकर कहा—दयानिधि,
‘अपना करुण और होनहार पुत्र पुन्देलों की आज्ञा के आगे
कर दिया । अब हम ज्ञान को निभाना तुम्हारा काम है ।
वही मूल्यवान् वस्तु अर्पित की है, इसे स्वीकार करो ।’

अपनी जान बचाना घोर नीचता है। मैं ऐसी स्वार्थान्ध क्यों हो गई हूँ ? लेकिन एक एक विचार उत्पन्न हुआ। योली— यदि आपको विश्वास हो जाय कि इन आदमियों के साथ कोई अन्याय न किया जायगा तब तो आपको चलने में कोई बाधा न होगी ?

राजा—(मोचकर) कौन विश्वास दिलायेगा ?

सारन्धा—बादशाह के सेनापति का प्रतिज्ञा-पत्र।

राजा—हां, तब तो मैं सानन्द चलूंगा।

सारन्धा विचार-सागर में डूबी। बादशाह के सेनापति से क्योंकर यह प्रतिज्ञा कराऊ ? कौन यह प्रस्ताव लेकर वहां जायगा और निर्दयी ऐसी प्रतिज्ञा करने ही क्यों लगे ? उन्हें तो अपनी विजय की पूरी आशा है। मेरे यहां ऐसा नीति-कुशल, धार्मिक, चतुर कौन है, जो दुस्तर कार्य को सिद्ध करे ? छत्रमाल चाहे तो कर सकता है। उसमें यह सब गुण मौजूद हैं।

इस तरह मन में निश्चय करके रानी ने छत्रमाल को बुलाया। यह उसके चारों पुत्रों में सबसे बुद्धिमान् और साहसी था। रानी उसे सबसे अधिक प्यार करती थी। जब छत्रमाल ने आकर रानी को प्रणाम किया तो उसके नेत्र मजल हो गये और हृदय से दीर्घ निश्वास निकला।

छत्रमाल—माता ! मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

रानी—आज लड़ाई का क्या दण्ड है ?

छत्रमाल—हमारे पक्ष में बड़ा अवलोक काम आ चुके हैं।

रानी—बुन्देलों की लान अब ईश्वर के हाथ है।

मन्दिर से लौटकर मारम्भा राजा चम्पनराय के पास गई और बोली, 'प्राणनाथ, आपने जो वचन दिया, उसे पूरा कीजिए।' राजा ने चौंकर पूछा, 'तुमने अपना वादा पूरा कर दिया ?' रानी ने वह प्रतिज्ञा-पत्र राजा को दे दिया । चम्पनराय ने उसे गौरव से देखा, फिर बोले—अब मैं चलूंगा और ईश्वर ने चाहा तो एक बार फिर शत्रुओं की खबर लूंगा । लेकिन सारन, सच बताओ, इस पत्र के लिए क्या देना पड़ा है ?

रानी ने कुण्ठित स्वर से कहा—बहुत कुछ ।

राजा—सुनू ?

रानी—एक जवान पुत्र ।

राजा को आश्चर्य लगा । पूछा—कौन ? अंगदराय ?

रानी—नहीं ।

राजा—रत्नसाह ?

रानी—नहीं ।

राजा—छत्रमाल ?

रानी—हां ।

जैसे कोई पक्षी गोली खाकर पंखों को फड़फड़ाता है और सध बेदम होकर गिर पड़ता है, वसी भाति चम्पनराय पलंग से उधले और फिर अचेत होकर गिर पड़े । छत्रमाल उनका परम प्रिय पुत्र था । उनके भविष्य की सारी कामनाएँ उसी पर अवलम्बित थीं । जब सचेत हुआ तब बोले, "मारन, तुमने बुरा किया । अगर छत्रमाल मारा गया तो बुन्देला वंश का नाश हो जायगा ।"

मघारों का एक दल आता हुआ दिखाई दिया । उसका माथा ठनका कि अथ कुराल नहीं है । यह लोग अवरय हमारे शत्रु हैं । फिर विचार हुआ कि शायद मेरे राजकुमार अपने आदमियों को लिये हमारी सहायता को आ रहे हों । नैराश में भी आशा माय नहीं छोड़ती । कई मिनटों तक यह इसी आशा और भय की अवस्था में रही । यहां तक कि यह दल निकट आगया और मिषादियों के दम्र माफ नगर आने लगे । रानी ने एक ठंडी मांस भी, उसका शरीर सुगन्धित वापने लगा । ये बादशाही सेना के लोग थे ।

मारम्भा ने महारों से कहा—होली रोक लो । गुन्देला मिषादियों ने भी तलवारें खींच ली । राजा की अवस्था बहुत भोचनीय थी, किन्तु जैसे दर्षा हुई आग हवा लगने ही प्रदीप्त हो जाती है, उसी प्रकार इस संकट का ज्ञान होते ही उनके जर्जर शरीर में वीरतामा चमक उठी । वे पालकी का पर्दा उठाकर बाहर निकल आये । धनुष-बाण हाथ में ले लिया । किन्तु यह धनुष, जो उनके हाथ में इन्द्र का वस्त्र बन जाता था, इस समय सरा भी न मुका । मिर में चकर आया, पैर धराये, और वे धरती पर गिर पड़े । भारी अमंगल की सूचना मिल गई । उस पल रहित पत्नी के सदृश जो मांस की अपनी गरक आने देखकर ऊपर की उचकता और फिर गिर पड़ता है, राजा अत्यन्त ही किममल कर उठे और फिर गिर पड़े । मारम्भा ने उन्हें समझा कर बिटाया और राजा कोलन की चट्टा का परन्तु मरने पर इनका निजला—आगलाप । इसका आगलाप मरने से एक गजद

अभिलाषा है कि मरू' तो यह मस्तक आपके पद-चमनों पर हो ।

चम्पतराय—तुमने मेरा मतलब नहीं समझा । क्या तुम मुझे इसलिए शत्रुओं के हाथ में छोड़ जाओगी कि मैं बेड़िया पहने हुए दिल्ली की गलियों में निन्दा और उपहास का पात्र बनूँ ?

रानी ने जिज्ञासा-भरी दृष्टि से राजा को देखा । वह उनका मतलब न समझी ।

राजा—मैं तुमसे एक घरदान मागता हूँ ।

रानी—सहर्ष मागिए ।

राजा—यह मेरी अंतिम प्रार्थना है । जो कुछ कहूँगा, करोगी ?

रानी—सिर के बल करूँगी ।

राजा—देखो, तुमने घबरेल दिया है । इनकार न करना ।

रानी—(कांपकर) आपके कहने की देर है ।

राजा—अपनी तलवार मेरी छाती में चुभो दो ।

रानी के हृदय पर बरसात-सा हो गया । बोली—जीवन-नाथ ! इसके आगे वह और कुछ न बोल सकी । आँखा में नैराश्य छा गया ।

राजा—मैं बेड़ियाँ पहनने के लिए जीवन रहना नहीं चाहता ।

रानी—मुझसे यह कैसे होगा ?

पाचया और अंतिम सिपाही धरती पर गिरा । राजा ने झुझकार कहा—इसी जीवन पर आन निभाने का गर्व था ?

मारम्भा ने कहा—अगर हमारे पुरों में से कोई जीव
रहा हो, तो ये दोनों सारों उसे सौंप देना ।

यह कह कर उमने यही वसाधार अपने हृदय में शुभो सी
जप वह अचेत होकर घटती पर गिरी तो उसका गिर राम
बम्बतराम की छानी पर था ।

दो डाक्टर

(१)

उनमें आकाश पाताल का अन्तर था ।

दोनों डाक्टर थे । दोनों एक ही मुहल्ले में रहते थे । दोनों एक ही कालेज में पढ़े थे । दोनों ने एक साथ क्राइनल की परीक्षा पास की थी । अब दोनों एक ही बाजार में प्रेक्टिस करते थे, और दोनों की दुकानें आमने-सामने थी ।

मगर फिर भी उनमें आकाश पाताल का अन्तर था । एक का नाम ककीरचन्द था, दूसरे का अमीरचन्द । एक पुरानी लकीर का ककीर था, दूसरा सर्वथा नवीन-विचाराधीन । एक धर्म के नाम पर जान देता था, दूसरा उसकी थिल्ली उड़ाता था । एक पूजा-पाठ किये बिना गुँह में पानी डालना भी पाप समझता था, दूसरा कहता था—यह मूर्खों के युग की यादगार है । मगर फिर भी दोनों परस्पर मित्र थे, एक दूसरे को चाहते थे, एक दूसरे के सुख-दुःख में काम आते थे । यह देख कर लोगों की आश्चर्य होता था । एक ओर एक दूसरे से इतने दूर दूसरी ओर एक दूसरे के इतने निकट । आग-पानी का ऐसा मेल समझ न समझ देगा होगा ।

एक दिन ककीरचन्द न अमीरचन्द से कहा—एक बात कह, मानोगे ?

अमीरचन्द (विचशना में)—अच्छा भई, ईश
बको, क्या बचते हो ?

कलीरचन्द—बचना यह है कि तुमने आज तक
नहीं भी, न कभी मन्दिर में गये हो; मगर अब कुछ
दिन है। कल तुम्हें पूजा करनी होगी। बवाबो, बनें।

अमीरचन्द—अब मेरे बचाने की बात ही क्या है।
तुमने वचन ले लिया, मुझे मानना होगा, हार
क्या लाभ होगा, यह मैं अभी तक नहीं समझ रहा।

कलीरचन्द—मेरा आत्मा प्रसन्न होगा—मेरा मन
प्रसन्न होगा कि थलो एक बार तो तुमने मन्दिर
कर ली।

अमीरचन्द ने कलीरचन्द की तरफ प्रेमपूर्ण आँखों
और गुरगुरा कर कहा—मेरा इरादा तो न था कि तुम
पूरी में जाओ, मगर मालूम होना दे, तुम मुझे धर्म-
आश्रितों। अब न मानूँ, तो पुरा-सा मुँह बना लेंगे।
माला ही न आश्रितों। तुम्हारा क्या बिगड़ेगा? मन्दिर
अपमान हो आयेगी। न बाबा! यह मुश्किल है। पूजा का
मन्दिर करके यह गिरगिट का धुआँ उड़ाने लगे। कल

ने कहा—आज तुमने मेरा जी गुप्त कर दिया है।

अमीरचन्द—मगर यह पूजा की विधि क्या है।
कल दे दो।

कलीरचन्द—कल करके आने से बैठ जाओ।

अमीरचन्द (विधवा से)—अच्छा भई, प्रतिज्ञा की।
बको, क्या बकते हो ?

फकीरचन्द—बकता यह हूँ कि तुमने आज तक कभी पूजा
नहीं की, न कभी मन्दिर में गये हो; मगर कल जन्माष्टमी का
दिन है। कल तुम्हें पूजा करनी होगी। बताओ, करोगे न ?

अमीरचन्द—अब मेरे बताने की बात ही कहाँ रह गई है ?
तुमने वचन ले लिया, मुझे मानना होगा, मगर इससे तुम्हें
क्या लाभ होगा, यह मैं अभी तक नहीं समझ सका।

फकीरचन्द—मेरा आत्मा प्रसन्न होगा—मेरा परमात्मा
प्रसन्न होगा कि चलो एक बार तो तुमने उमकी पूजा
कर ली।

अमीरचन्द ने फकीरचन्द की तरफ प्रेमपूर्ण आँखों से देखा
और मुस्करा कर कहा—मेरा इरादा तो न था कि तुम्हारी स्वर्ग-
पुरी में जाता, मगर मालूम होता है, तुम मुझे घसीटकर ले ही
जाओगे। अब न मानूँ, तो बुरा-मा मुँह बना लोगे। दो दिन
स्थाना ही न स्थाओगे। तुम्हारा क्या बिगड़ेगा ? भाभी हमसे
अप्रसन्न हो जाएंगी। न बाबा ! यह मुश्किल है। पूजा कर लेंगे।

यह कहकर वह भिगरेट का धुआँ पड़ाने लगे। फकीरचन्द
ने कहा—आज तुमने मेरा जी बुरा कर दिया है।

अमीरचन्द—मगर यह पूजा की विधि क्या है, यह तो
बता दो ?

फकीरचन्द—गान करके अर्घ्य चढ़ जाओ और माला

हटकर खड़ा हो गया। पचराहट इतनी थी कि सारीस के मुँह से बात भी न निकलती थी—जोर जोर से हाँप रहा था।

गावित्री ने मन्गई से लगे को गिरह देते हुए एक बा
जमकी तरफ देखा और फिर स्टेटर मुनते हुए कहा—क्यों
मागी, पचगये हुए क्यों हो ?

माँगी ने दोनों हाथों से सलाम करके कहा—माँ जी ! छोड़ न जाने क्या हो गया है ? रात को झुश झुश सोया था, आकट कर देखा तो बेहोश पड़ा है । वहने गरम तेल की मालि करने रहे कि मायद होश में आ आय, मगर हिलना ही नहीं है । आन कहा आया है । (उधर-उधर देखकर) डाक्टर माह्व कहा है

मावित्री ने जमी सरह गिर भुजाये कमर की तरफ इशा
 दिया, और स्वेटर चुनने हुए बोली—चरा धीरे-धीरे बो
 साया फेंक रहे हैं—कब ग बंदोश दे ?

माया गिबुगिबुकर बाबा—मा जी, हमें क्या मायूम ? मरे
 इत कर मायूमने जाया करवा था । आज दिन अदे तक मो
 रवा हो मैं । आगरी अगन मे कहा—हमो वगा, कक तक मो
 रहेगा ? इतकर वगा जी बढाग पडा था ।

१६ कलकत्ता मागो न अहंता ही कलकत्ता नरक हल्ला' हा
दुसरा खोला १६ कलकत्ता न

[illegible][illegible]

माघी—(फिर हाथ बांध कर) नहीं मां जी, मेरा यह मुँह कहाँ । पर यह हर है कि कहीं और कोई तकलीफ न हो जाय । यहाँ आप हुक्म दें, तो सारा दिन दरवाजे पर पड़ा रहूँ, आप ही का सेवक हूँ ।

यह कह कर गरीब ने फिर उस कमरे की तरफ देखा, जिसके अन्दर डाक्टर मादय बैठे माला केर रहे थे ।

माघित्री—खरा बैठ, अभी निकलने हैं ।

यह कह कर माघित्री अन्दर खली गई । माघी धूप में बैठ गया और प्रतीक्षा करने लगा । उसकी आँखें दरवाजे पर जमी थी । ऐसी उम्मीदना, ऐसी लुकापना, ऐसी श्रद्धा में किसी पुजारी ने अपने उपास्य देवता की तरफ भी शायद ही कभी देखा होगा मगर दरवाजा किसी अभाग के भाग्य के समान झुलका ही न था । माघी सोचना था, अमोर लोग जब माला केरते हैं तब भी गरीबी ही को तरलीक होनी है । अगर मेरी जगह कोई अमीर होता, तो झटपट माला छोड़कर चट खड़े होते हम गरीब हैं हमारी काँटें परवाह ही नहीं करना ।

इतन में अर्धिन ने आकर कहा—व अन्दर कहलु है पर
 १४ में दया मत रना है । यना देना । व लोका रना है

माघी ने उसी वक्त उठ कर कहा—माघीजी—
 १४ में दया मत रना है । यना देना । व लोका रना है
 १४ में दया मत रना है । यना देना । व लोका रना है
 १४ में दया मत रना है । यना देना । व लोका रना है

हैं। इतना भी न सोचा कि इसके मुँह पर तेरी बात न कई के दिल को लग जायगी। और तूने यह सब कुछ सुन लि मायी (ठंडी आह भरकर)—गरीबों को सब कुछ ही पड़ना है।

मंगिन—मगर क्या गरीबों को किसी और परमेश्वर बनाया है? पूजा तो फिर भी हो सकती थी। परमेश्वर कभी भाग न जाता था, पहले देख आता, फिर मजे में बैठ का मारा दिन पूजा करता। कौन रोकता था?

मायी (दरवाजे की तरफ देखकर)—आज माता, सन ही नहीं होनी।

मायी जानता था, इस समय बुलाना ठीक नहीं; बड़े गुम्मा होंगे। आश्चर्य नहीं, मार कर निकाल दें। मगर वह बाप भी, और उसका बेटा बेमुघ था। उसके दिल को लगी थी। उससे बेटा न जाता था। एक-एक क्षण एक-एक साल से भी बढ़कर बीतता था। कुछ देर दिल और दिमाग में लड़ाई होती रही। इसके बाद वह छुटकर दरवाजे के पास चला गया और धरते धरते मगर बिनीत भाव से बोला—डाक्टर साहब!

डाक्टर साहब ने मुँह से जवाब न दिया, केवल खांसकर रह गये; मगर मायी में इतनी बुद्धि कहां कि इस इशारे का मतलब समझता। वह दरवाजे के और भी पास मटक गया और बोला—डाक्टर साहब!

डाक्टर साहब की आँखें क्रोध से लाल हो गईं। सोचने लगे, क्या मुझे अब इतना भी अधिकार नहीं, कि एक घंटा एकान्त

उत्तर में भगिन कुछ कहना ही चाहती थी कि अमीरचन्द ने उसे इशारे में रोक दिया, और खुरा गरम होकर बोले-
किमी और को ले गये होने, मैं माला फेर रहा था।

मायी—सरकार, हम सारीयों की कौन सुनता है ? आप आशा थी, आपके पास खले आये।

अब अमीरचन्द का गारा क्रोध शान्त हो चुका था। खुरा मुन्नग कर बोले—मगर क्या एक-आध घण्टा इन्तजार न कर सकते थे ? क्याओ ?

मायी—(गिरगिट्टा कर) बिलकुल बेहोश पड़ा है, सरकार ! वरा बलकर देना तो ही जीवन-भर दुआएँ देता रहूँगा ! मायी उमर को बसाई है। अमीर बवाहे को एक ही मरीना हुआ है।

अमीरचन्द ने माया रस की और मूढ़ पहन कर उनके साथ हो लिये। होश में लाने की कुछ दवाएँ भी साथ ले ली। जब लौटे, हम समय एक घण्टा गुज़ा था। उस समय तक भूमे-स्वामी बड़ी बेचैनी इसको होश में लाने की कोशिश करने रहे। अब वह होश में आ, और नीचे-नीचे बानें कर रहा था। मायी और भगिन का रोम-रोम अमीरचन्द को दुआएँ दे रहा था। अमीरचन्द हम-स्वामीद व। भोजन करने थे, मगर खात्र उन्हें इस नियम के दूर जान का परवा न थी। खात्र भूमे-स्वामी होने पर भी स्थान, जगज हृदय दिखाई देते थे। खात्र उन्होंने सारीयों को कुछ मूढ़ को खात्र उन्होंने प्रीति न ली थी, प्रीति के बर निव को दुआ कर व।

अनीरचन्द उस नाना नाकर दूकान पर पहुँचे, उन स
उनकी दीवार को छड़ी में सबा दो बर चुके थे। कन्नाउरडा
कहा—मद रोगी लौट गये।

अनीरचन्द ने कोठ उगार कर खुदों पर लटकाने हुए कहा—
लौट गये तो लौट जायें, कोई परवा नहीं।

कन्नाउरडा ने एक चिट्ठी उनके हाथ में देकर कहा—सो
मंगलदान का आदमी आया था। कहा था कि जिन समय
आते, उनी समय भेज देना। उनकी बेटी बहुत बीमार है।

अनीरचन्द ने कन्नाउर से मुँह सात करके चिट्ठी ले ली, और
उने पड़े दिना भेद पर रख दिया।

कन्नाउरडा ने कहा—मेठ साहब का आदमी दो बार
आकर लौट गया है। बड़ी ताकत दे कहा था। कहा था,
दौरान आ जायें।

अनीरचन्द ने कुर्सी पर बैठकर जवाब दिया—अच्छा !
इसने मे हाकटर अनीरचन्द ने अपना दूकान पर ले फुकार
कर कहा—अभी आये हैं या नहीं ? आये हों तो भेज दो।
कन्नाउरडा ने जवाब दिया—अभी आये हैं। (अनीरचन्द
का कदम आगे बढ़ा)

अनीरचन्द ने अनीरचन्द दूकान पर लटकाने हुए कहा—
अभी आये हैं या नहीं ? आये हों तो भेज दो।
कन्नाउरडा ने जवाब दिया—अभी आये हैं। (अनीरचन्द
का कदम आगे बढ़ा)

अमीरचन्द ने अपने-आपसे कहा—आज महाभारत खिड़गा ।

दो मिनट बाद कसीरचन्द ने आकर पूछा—आज तो बड़ी देर में आये । अभी तक माला फेर रहे थे, या किमी को देखने चले गये थे ?

अमीरचन्द ने कुर्मी पर बैठे बैठे अपने मित्र की तरफ देखा, और ऐसे, जैसे कोई किमी की शिरायत करता है, बोले—भई, क्या कहूँ ! इन मरीखों के मारे नाकों में दम है । दरवाजा बन्द कर लिया था, मजसे कह दिया था कि हमें कोई न बुलाये, मगर कौन सुनता है ? एक आदमी आकर दरवाजा तोड़ने लगा । जी तो चाहता है, डाकदरी छोड़कर कोई और काम शुरू कर दूँ । यह भी कोई पेशा है, न दिन को घैन न रात को आराम ! कोई छः घंटे का नौकर है, कोई आठ का, यहां चौबीसो घंटों की गुलामी है । माला फेरने का भी अवकाश नहीं ।

कसीरचन्द ने मिर हिलाया । मानो कह रहे थे, मुझे पहले ही आराम न थी । फिर कहा—कौन आया ? कोई अमीर होगा ।

अमीरचन्द—अमीर होता, तो नाक जवाब दे देता । कह देता, किमी और को ले जाइए ।

कसीरचन्द—तो क्या कोई भिखमंगा था, ज़िम्मे लिये जाता घरी रह गई ?

अमीरचन्द—बड़ी अपना भर्मी माया था, बड़ा गिड़गिड़ाता था । और गिड़गिड़ाना क्या था, रोना था । उसका लकड़ ही लकड़ा है, बड़ी बीमार है मुन गया आ गई माया, का

अमीरचन्द—चलो, मान लिया । कितने बजे चलोगे ?

कलीरचन्द—यही आठ सवा आठ बजे, और क्या ! रही गायब न हो जाना ।

अमीरचन्द—मेरी क्या मजाल है ।

मगर आठ बजे अमीरचन्द दूकान पर न थे । कम्पाउण्ड ने कहा—मापी आया था उसीके साथ चले गये हैं ।

कलीरचन्द—बुद्ध कह गये हैं या नहीं ?

कम्पाउण्डर—कहते थे, अगर मैं एक घंटे तक न आऊँ तो दूकान बन्द करके चले जाना । मेरा खयाल है देर है लौटोगे । यह धोड़ फिर बीमार हो गया है ।

कलीरचन्द—अरा मीचो, मारी दुनिया भगवान के दर्शन को जा रही है, लाना माहब मंगियों के मकानों की घेर कर रहे हैं । हम चाहते थे, यह भी दर्शन कर लें, मगर जब माहब ही पड़े हो, तो कोई क्या करे । छीर, हमने अपना मित्र-वर्ष पूरा कर दिया । हमें यही संतोष है ।

कम्पाउण्डर—सबेरे में मंगलदाम का आदमी आया था और कह गया था कि आपें, लो भेज देना । जब चलने की तैयार हुए, तो वही माहब आ गया और रोज़ लगा । बस, मेंट की गरज न गये, माहब के साथ चले गये ।

कलीरचन्द—(आश्चर्य में) अरे, इतना मूर्खता ! यही ठीक है, तो प्रिक्रिडम बन चुकी । फिर रहेंगे, हमें तो कोई पड़ना ही नहीं । अरे बाबा, जब अपने आपका मुँह नहीं पढ़ता, तो मुझे और कौन पढ़ाना ? क्या वह नहीं बताया हुआ था

अमीरचन्द ने शरीर के गिर्दे कपड़ा लपेट लिया और बोले—मुनाओ !

ककीरचन्द—ऐसी अजीब स्थिति है कि चौक पड़ोगे । मेरा खयाल है, शायद तुम विजयाम ही न करो । ममके (हँसता है)

अमीरचन्द—तो जितने शब्दों का भूमिका में प्रयोग कर चुके हो, उससे आधे शब्दों में यह बात भी मुना दो ।

ककीरचन्द ने कहा—तुम्हें यह तो मालूम ही है कि मैं पूजा-पाठ को बहुत महत्व देता हूँ । मगर मैं उठता आठ बजे ही हूँ । आज भगवान् जाने क्यों मेरी आंख तीन बजे ही मुल गई । मैंने सोचा, चलो, आज इसी समय पूजा कर लो । मैं नहा धो कर पूजा के कमरे में चला गया और पूजा करने लगा । इतने में मुझे ऐसा मालूम हुआ कि कमरा किमी अलौकिक प्रकाश से भर गया है । आंख उठा कर देखा तो मेरे सामने श्रीकृष्ण की मूर्ति न थी, स्वयं श्रीकृष्ण खड़े मुस्करा रहे थे ।

अमीरचन्द—(आश्चर्य से) स्वयं श्रीकृष्ण खड़े मुस्करा रहे थे ।

ककीरचन्द—मैंने उनकी तरफ देखा और फिर उनके चरण पकड़ लिए । उस समय मेरे मन की जो हालत थी, उसका बयान नहीं हो सकता—कूला न समाता था । ममभा, जीवन की समस्या सफल हो गई । भगवान् अपने भक्त को दर्शन देने आ गये । दूसरे क्षण में भगवान् ने मुझे उठाकर मरदा कर दिया, और मेरी तरफ देखा । अब उनकी आगों में आग का चित्रगारिया

यह कहते-कहते ककीरचन्द ने अपने मित्र के पाँर प लिये, और कहा—आज तक तुम मेरे प्यारे थे; मगर अब मेरे भगवान के प्यारे हो ।

इस समय उनकी आंखों में श्रद्धा और भक्ति के च झलक रहे थे ।

ताई

(१)

“ताऊजी ! हमें लेलगाड़ी (रेलगाड़ी) ला दोगे ?”—कहता हुआ एक बचपनीय बालक बाबू रामजीदाम की ओर दौड़ा। बाबू मादब ने दोनों बाहें फैलाकर कहा—हां बेटा, ला दूंगे।

उनके इतना कहते-कहते बालक उनके निकट आ गया। उन्होंने बालक को गोद में उठा लिया, और उसका मुख घूमकर बोले—क्या करेगा रेलगाड़ी ?

बालक बोला—उसमें बैठ के बली दूला जायेंगे। हम जायेंगे, चुप्री को भी ले जायेंगे। बाबू जी को नहीं ले जायेंगे। हमें लेलगाड़ी नहीं ला देंगे। ताऊजी, मुम ला दोगे, मुझे ले जायेंगे।

बाबू—और किसे ले जायगा ?

बालक दम-भर मोचकर बोला—बद्ध, और किमी को नहीं ले जायेंगे।

पाम ही बाबू रामजीदाम की अर्द्धांगिनी बैठी थी। बाबू मादब ने उनकी ओर इशारा करके कहा—और अपनी माई को नहीं ले जायेंगा ?

बालक कुछ देर तक खामोश रहा। फिर आगे बढ़ता रहा।

बच्चे को उनकी गोद में बिठाने की चेष्टा करते हुए :
 प्यार नहीं करोगी तो फिर रेल में नहीं बिठावेगा। क्यों
 मनोहर ?

मनोहर ने ताऊ की बात का उत्तर नहीं दिया। ऊपर
 ने मनोहर को अपनी गोद से धकेल दिया। मनोहर नीचे
 पड़ा। शरीर में तो चोट नहीं लगी, पर हृदय में चोट लगी।
 बालक रो पड़ा।

बाबू साहब ने बालक को गोद में उठा लिया, चुपचाप
 चुपकार कर चुप कराया और तत्पश्चात् उसे कुछ पैसों
 रेलगाड़ी ला देने का बचन देकर छोड़ दिया। बालक मनोहर
 भय-पूर्ण दृष्टि में अपनी नाई की ओर ताकता हुआ उस स्थान
 में खड़ा गया।

मनोहर के चले जाने पर बाबू रामजीदाम रामेश्वरी ने
 बोले—तुम्हारा यह कैसा व्यवहार है ? बच्चे को क्यों
 दिया। जो उसके चोट लग जानी तो ?

रामेश्वरी मुंह मटककर बोली—लग जानी तो अच्छा
 होता। क्यों मेरी गोपदा पर लादे देते थे ? आप ही तो
 मैं ऊपर डालते थे और आप ही अब लेती जाने करते हैं !

बाबू साहब कृदकर बोले—इसी का गोपदा पर लादे
 करते हैं ?

रामेश्वरी — आप नहीं तो क्यों करते हैं ? तुम्हें तो अब
 आप ही 'कल' के दुष्टों का लालच देती हैं, न जाने क

ने तो सब चौपट कर रक्खा है। ऐसे ही विश्वास पर सब
गाने तो काम कीसे बने। सब विश्वास पर ही बैठे रहें,
काहे को किसी बात के लिए चिंता करे।

बाबू साइब ने सोचा कि मूर्ख स्त्री के मुँह लगना ठीक नहीं
अतएव वह स्त्री की बात का कुछ उत्तर न देकर वहाँ से हट

(२)

बाबू रामजीदास धनी आदमी हैं। कपड़े की सादर
बाबू कर्तब हैं। भेन-देन भी हैं। इनका एक छोटा भाई है। उसका
नाम है कृष्णदास। दोनों भाइयों के परिवार एक ही घर
है। बाबू राम जीदास का आयु ३४ वर्ष के लगभग है, की
छोटे भाई कृष्णदास की २७ के लगभग। रामजीदास निर्मात्य
है, कृष्णदास के जो मरनाये हैं—एक पुत्र, बही पुत्र जिसका
पन्द्रह वर्षिन हो चुका है और एक बच्चा। बच्चा की उम्र
जो वर्ष के लगभग है।

रामजीदास अपने लड़े भाई, और बगली भगवान पर
बड़ा लाल दया है—जसा लड़का बड़ा प्रभाव से उन्हें अपनी
भगवान होनेवाले बनी भगवानों ही नहीं लड़े भाई का भगवान
का उभारने का भगवान भगवान है। जसा है बच्चा रामजीदास
के इन दो लड़े भाई अपने भाई का नाम बाबू रामजीदास है

रामजीदास का लड़े भाई का नाम बाबू रामजीदास है
रामजीदास का लड़े भाई का नाम बाबू रामजीदास है
रामजीदास का लड़े भाई का नाम बाबू रामजीदास है
रामजीदास का लड़े भाई का नाम बाबू रामजीदास है

कुछ अपनी तरफ से नो घनाकर कहते ही नहीं हैं । शान्त्र में जो लिखा है, वही वे भी कहते हैं । शान्त्र भूटा है, तो ये भी भूटे हैं । अमेज़ा क्या पढ़ा, अपने आगे किंगी को गिनते ही नहीं । जो बाने बाप-दादा के अमाने में चली आई हैं, उन्हें भूटा बताने हैं ।

बाबू साहब—तुम बात समझनी नहीं, अपनी ही ओटे जाती हो । मैं यह नहीं कहता कि ज्योतिष शान्त्र भूटा है । सम्भव है वह सच्चा हो । परन्तु ज्योतिषियों में अधिकांश भूटे होते हैं । उन्हें ज्योतिष का पूर्ण ज्ञान नो होना नहीं, दो-एक छोटी-मोटी पुस्तकें पढ़ कर ज्योतिषी बन बैठने हैं और लोगों को ठगते फिरते हैं । ऐसी दशा में उनकी बातों पर कैसे विश्वास किया जा सकता है ?

रामेश्वरी—हूँ, सब भूटे ही हैं, तुम्हीं एक बड़े मरुपे हो ! अच्छा, एक बान पूछती हूँ भला तुम्हारे जी में मन्तान की इच्छा क्या कभी नहीं होती ?

इस बार रामेश्वरी ने बाबू साहब के हृदय का कोमल स्थान पकड़ा । वे कुछ देर चुप रहे । परंप्रान्त एक लम्बी साँस लेकर बोले—भला ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसके हृदय में मन्तान का मुख देखने की इच्छा न हो ? परन्तु किया क्या जाय ? अब नहीं है, और न होने की कोटि आशा ही है, तब उमर लिए अर्थ चिन्ता करने से क्या लाभ ? दुःख है मित्रा, जो बान अपनी मन्तान में होती, वही भाई की । नाम से भी ही । है जिनका मन्त अपनी प-

कुछ अपनी तरफ से तो बनाकर कहते ही नहीं हैं। शास्त्र में जो लिखा है, यही वे भी कहते हैं। शास्त्र भूटा है, तो वे भी भूटे हैं ! अमेजी क्या पढ़ा, अपने आगे किसी को गिनने ही नहीं। जो बातें बाप-दादा के जमाने में चली आई हैं, उन्हें भूटा बताने हैं।

बाबू माहय—तुम बान समझती नहीं, अपनी ही ओंठें जाती हो। मैं यह नहीं कहता कि उद्योतिष शास्त्र भूटा है। सम्भव है यह सच्चा हो। परन्तु उद्योतिषियों में अधिकारी भूटे होते हैं। उन्हें उद्योतिष का पूर्ण ज्ञान तो होना नहीं, दो-एक छोटी-मोटी पुस्तकें पढ़ कर उद्योतिषी बन बैठते हैं और लोगों को ठगते फिरते हैं। ऐसी दशा में उनकी बातों पर कैसे विश्वास किया जा सकता है ?

रामेश्वरी—हं, सब भूटे ही हैं, तुम्हीं एक बड़े सच्चे हो ! अच्छा, एक बान पूछती हूँ भला तुम्हारे जी में सन्तान की इच्छा क्या कभी नहीं होती ?

इस बार रामेश्वरी ने बाबू माहय के हृदय का कोमल स्थान पकड़ा। वे कुछ देर चुप रहे। पत्पञ्चान एक लम्बी साँस लेकर बोले—भला ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसके हृदय में सन्तान का सुख देखने की इच्छा न हो ? परन्तु किया क्या जाय ? जब नहीं है, और न होने को कोई आशा ही है, सब उसके लिए व्यर्थ चिन्ता करने में क्या लाभ ? इसके मिया, जो बान अपनी सन्तान में होना, यही भाई की सन्तान में भी हो रही है; जितना स्नेह अपनी पर है, वही इन पर भी है। ओ

हो जाती है ? मुक्ति का भी क्या सहज उपाय है । ये जितने पुत्र पाने हैं सभी की तो मुक्ति हो जाती होगी ?”

रामेश्वरी निरुत्तर होकर बोली—अब तुम से कौन बकवास करे । तुम तो अपने मामले किमी की मानते ही नहीं ।

(३)

मनुष्य का हृदय बड़ा समरस-प्रेमी है । कैसी ही उपयोगी और कितनी ही सुन्दर वस्तु क्यों न हो, जब तक मनुष्य उसके पराई समझता है, तब तक उससे प्रेम नहीं करता, सिन्धु भद्रा से भरी और विषयगुल काम में न आन वाला वस्तु को भी यदि मनुष्य अपनी समझता है तो उससे प्रेम करता है । पराई वस्तु कितनी ही मूल्यवान् क्यों न हो कितनी ही उपयोगी क्यों न हो, कितनी सुन्दर क्यों न हो, उसके नष्ट होने पर मनुष्य बुद्ध भी दुःख का अनुभव नहीं करता, इमजिण कि वह वस्तु उसकी नहीं, पराई है । अपनी वस्तु कितनी ही भरी हो, काम में न आने वाला हो, उसके नष्ट होने पर मनुष्य को दुःख होता है, इमजिण कि वह अपनी है । कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मनुष्य पराई वस्तु से प्रेम करने लगता है । किसी दशा में भी जब तक मनुष्य उस वस्तु का अपना बनाकर नहीं छूटता, जबवा अपने हृदय में यह व्यवस्था नहीं कर लेता कि वह वस्तु मेरा है तब तक उसे मनुष्य नहीं मानता । समस्त में उस व्यवस्था के नाह और उस में समझ इन दो ही कारणों से ही वह वस्तु उसकी बनती है । तब तक तब तक वह वस्तु उसकी नहीं बनती ।

उमके पीछे-पीछे मनोहर भी दौड़ता हुआ आया, और वह भी उसी की गोद में जा गिरा। रामेश्वरी उस समय मारा डेप भूल गई। उसने दोनों बच्चों को उसी प्रकार हृदय से लगा लिया, जिस प्रकार वह मनुष्य लगाना है जो कि बच्चों के लिए तरस रहा हो। उसने बड़ी सतृष्ण भाव से दोनों को प्यार किया। उस समय यदि अपरिचित मनुष्य उसे देखता, तो उसे यही विश्वास होता कि रामेश्वरी ही उन बच्चों की माता है।

दोनों बच्चे बड़ी देर तक उसकी गोद में खेलते रहे। सहसा उसी समय किसी के आने की आहट पाकर बच्चों की माता वहां से उठ कर चली गई।

“मनोहर, ले रेलगाड़ी।” कहने हुए बाबू रामजीदाम छत पर आये। उनका स्वर सुनते ही दोनों बच्चे रामेश्वरी की गोद से उद्धत कर निकल भागे। रामजीदास ने पहले दोनों को मूख प्यार किया, फिर बैठकर रेलगाड़ी दिखाने लगे।

इधर रामेश्वरी की नींद-भी टूटी। पति को बच्चों में मगन होने देखकर उनकी भींठें तन गईं। बच्चों के प्रति हृदय में फिर वही घृणा और डेप का भाव जाग उठा।

बच्चों को रेलगाड़ी देख कर बाबू माहय रामेश्वरी के पास आये, और मुस्कराकर बोले—आज तो तुम बच्चा + बच्चा प्यार कर रही थीं। इससे मान्य होना है कि तुम्हारा हृदय में भी इनके प्रति कुछ प्रेम अवश्य है।

रामेश्वरी को पति का यह बात बहुत दुःख लगा। उस अपनी

इस बार उसकी भोली प्रार्थना से रामेश्वरी का कलेजा बुरा पसीज गया। वह कुछ देर तक उसकी ओर स्थिर दृष्टि से देखती रही। फिर उसने एक लम्बी साँस लेकर मन ही मन कहा—यदि यह मेरा पुत्र होता, तो आज मुझसे बढ़ कर भाग्यवान् स्त्री संसार में दूसरी न होती। निगोड़ा मारा किना सुन्दर है और कौमी प्यारी प्यारी खानें करता है—यही जो चाहता है कि उठाकर छाती से लगा लूँ।

यह सोचकर वह उसके मिर पर हाथ फेरने वाली ही थी कि इनने में मनोहर उन्हें मौन देखकर बोला—तुम हमें पतङ्ग मरी मंगवा लोगी, तो ताऊ जी से कहकर तुम्हें पिटवायेंगे।

यद्यपि बच्चे की इस भोली बात में भी बड़ी माधुरता थी, तथापि रामेश्वरी का मुख खोप के मारे लाल हो गया। वह उसे निवृद्ध कर बोली—वा, वह दे अपने ताऊ जी से। देखूं वे भेग क्या कर लेंगे।

मनोहर भयभीत होकर उसके पास से हट आया और फिर सन्तुष्ट नयी से आकाश में उड़ती हुई पतङ्गी को देखने लगा।

इस रामेश्वरी ने सोचा—यह सब ताऊजी के दुलार का फल है कि बल का छोटा मुझ भसकता है। दूसरा कह कि इस दुलार पर चित्रणी दूँ।

कभी समय आया तो पतङ्ग वह घर उगी छत की ओर आई और रामेश्वरी के कमरे में जाती हुई उसका आँसू गिरा। वह के लगी आँसू बहाए ताऊजी ने कहा रामेश्वरी। लकी हुई वे बचल बगी ॥ १३ ॥ इ. १३ ॥ रामेश्वरी के आँसू

मार कर छज्जे पर गिर पड़ी ।

रामेश्वरी एक सप्ताह तक सुगार में बेहोश पड़ी रही । कर्म कभी वह खोर में चिल्ला उठती, और कहती—देगो-देगो ब गिरा जा रहा है—उसे बचाओ—दौड़ो—मेरे मनोहर को बचाओ । कभी वह कहती—बेटा मनोहर, मैंने तुम्हें नहीं बचाया हां, हां, मैं चाहती, तो बचा सकती थी—मैंने देर कर दी इसी प्रकार के प्रलाप वह किया करती ।

मनोहर की टांग उलझ गई थी । टांग बिठा दी गई थी, ब कमजोर फिर अपनी असली हालत पर आने लगा ।

एक सप्ताह बाद रामेश्वरी का खर कम हुआ । अच्छी ठा होश आने पर बगने पूछा—मनोहर कैसा है ?

रामजीदाग ने जवाब दिया—अच्छा है ।

रामेश्वरी—उसे मेरे पास लाओ ।

मनोहर रामेश्वरी के पास लाया गया । रामेश्वरी ने उ बड़े ध्यान से हृदय में लगाया । आंखों से आंगुओं की माला लगा गई । दिव्यदिव्यों में माला दप गया ।

रामेश्वरी कुछ दिनों बाद पूर्ण स्वस्थ हो गई । और मनाह ना अब उसका प्राणाधार हो गया है । उसके बिना उसे प चलना ही कम नही है ।

बदला

(१)

देश में अकाल पड़ा। गांव-देहात उजड़ा हुआ था। दिन अंधेरी रात की तरह भयानक मालूम पड़ता था। लोग दोनों के लिए तरसते, भूख में छटपटाने और पैसे के लिए रोते थे। ओह ! दैव का कितना भीषण परिहाम था। आँखें धँस गई थीं, ठोकरें बैठ गई थीं और शरीर निर्बल हो गया था।

गांव के लोग कहते—ईश्वर का कोप है। बरसात आकाश की ओर देखते ही कटी, जाड़ा ठिठरते हुए कटा और गर्मी अब धूप की आगला में कट रही है। कैसा अद्भुत खेल है। सचमुच अकाल था। भूमि अपना सूना आँचल फैलाये हुए बैठी थी।

वह गांव सिमक रहा था। चन्द्रमा ने झोपड़ियों के उस टिमटिमाने हुए प्रकाश को चुरा लिया था। चांदनी अपनी छाया में बैठकर उन झोपड़ियों से उनकी कहानी सुनती। सियार बोल रहे थे। मझाटा था। राजनों नाटक-नृत्य देख रही थी।

मोनी अपनी उदास झोपड़ी में पड़ा सोचता था। रात आँखों से सब लड़ी थी। जागने की कटी। जमींदार की माल-गुजारी देना है। क्या वेदस्थल हो जायगा पर उजड़ जायगा, सब समाप्त हो जायगा।

मोना को पीछर पहुँचाकर मोना लौट आया। गगने मन्द मोना ने आँसू बराने हुए कहा—भिड़ी भेजना और हो मरे तो माझ दू मर्तीने में नभे जाना।

“देभर की जैमी इच्छा” कहकर मोनी चला आया।

मोनी के घर में भगवानदाम निधारी का बड़ा मान था। गाँव में वे बड़े मीठे, मरल जायग थे। मोनी की लापों रुई बड़ी पसन्द थी। मार्ग में जब कभा देगने मो उमड़ी पीट पर हाथ फेरने हुए पुछारने। मोनी जानना था, लापों उनके यहाँ रहेगी। अनन्य लालो को लेकर मोनी उनके द्वार पर पहुँचा और प्रणाम किया।

उन्होंने पूछा—कहाँ मोनी, कैसे चल ?

महाराज, सब कुछ चला गया, अब मैं भा बम्बई जा रहा हूँ। मोनी ने उत्तर दिया।

क्या करोगे ? दिन का फेर बड़ा विचित्र होता है। उमीदार बड़ा दुष्ट है। अन्धेर-नगरी है। कारिन्दा जो चाहता है, करता है। उमीदार को अपना मौज से ही कुर्मत नही मिलती—कहकर निधारी जो लाली की ओर देखने लगे।

भाग्य में जो लिखा था, मो हूँगा। अब आप लोगों का आशीर्वाद लेकर जाता हूँ। टिकट के लिए रुपय नहीं है। लालो को लेकर आया हूँ, २० रुपयों की उम्बरन है। लाला आपके यहाँ रहेगी।—मोनी ने बड़ी निराशा से कहा।

तुम्हारे कपूर उसे तनिक भी दिया न था। उजाड़कर हो छोड़ा। कब जाओगे ? — पचान करने दूँ। लाला जा न रहा।

अपना अभिप्राय प्रकट किया । उसके प्रति उन लोगों की सहानुभूति हुई । उमी दिन साहब से भेंट हुई, मोती को नौकरों मिल गई ।

साहब की 'हेरी' थी । दूध का व्यवसाय होता था । मोती को दूध दुहने का काम मिला था । वह इस काम में निपुण भी था । साहब के सामने उसकी परोक्षा हुई थी ।

दिन-पर-दिन बीतने लगे । वह बड़े परिश्रम से अपना कार्य करता । अपने नष्ट व्यवहार के कारण सब से हिल-मिल गया था । साहब उसमें बड़े प्रसन्न रहते । उसका विश्वास जमाता गया ।

मोती का लिखवाया हुआ पत्र मिला था । मोती का हाल पूछा था, रुपये मांगे थे, और कब आवेगा, यह भी पूछा था ।

मोती ने मोती को रुपये भेजे और उत्तर में लिखवाया—
 “मैं अब बड़े सुख से यहां हूँ । साहब के पास रुपया जमा कर रहा हूँ । दूध के व्यवसाय में यहां बड़ा लाभ है, मैं अच्छी तरह उसे जान गया हूँ । कुछ दिन नौकरी करके रुपया जमा करूंगा । फिर खुद का कारोबार करूंगा । बड़ा लाभ होगा, तब तुमको भी बुला लूंगा ।”

दो वर्ष बीत गये ।

जिल्लों से मोती न गाय और भेस मगवाई । कल्पित-देखते उस का भाग्य समझा । सफलता में शान्छता हो बली । दूध-व्यवसाय

मोना ने पूछा—कितना है ?

मोनी ने कहा—एक लाख में कुछ अधिक !

मोना पुनः की तरह मोनी की ओर देखने लगी । बड़े धन पड़े ।

(४)

बड़ी मरम मन्ध्या थी । एक युग के बाद मोनी पर लैंड आया था । उसके ब्रह्म पर अब एक सुन्दर महान बन रहा था । बड़ा परिवर्तन हो गया था । पैसों का प्रभाव था, गांव के लोग मोनी को घेरे बैठे थे । वह अपना वृत्तान्त सुना रहा था । उन्हीं लोगों की बातचीत में मोनी को मालूम हुआ कि यमीदा वन के मार्ग की सीमा पर पहुँच गया है ।

सीमा को देख कर मोनी दुखी हुआ । वह बूढ़ा हो गई थी । अब दूध नहीं देती थी । उसकी टाँगियाँ निकल आई थी । मोनी उन्ही दिन बड़े साधन को रुपये में प्रसन्न कर सीमा को अपने यहाँ ले आया ।

आज गांव की नीलाभी थी । यमीदारी की छावनी पर दुमों बज रही थी । बड़े-बड़े सदाजन एकत्र हुए थे । विस्मयिता के चेहरे में दिया हुआ यमीदार अपना नाम जग्य दम रहा था ।

मोनी को भी समझा दिया । वह बड़ा उदास था । जाँटों का बहुत बाधक वह निकल । मोना ने समझा—माँ नानास म गांव लौटेंगे । गांव के लोग अब दुमका पहने म अनुमन कर रहे थे ।

श्री सचिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

आप पंजाब-निवासी हैं । आपके पिता श्रीयुग दा० होता राज्को केन्द्रीय सरकार के पुरातत्व विभाग में सम्मान प्रतिष्ठित कार्यकारी थे । आपका जन्म सन १९०९ में कविया, जिला मोतिलाल हुआ । उन दिनों आपके पिता जी वहीं मुद्राई के कार्य का निर्वहण कर रहे थे । आपको प्रारम्भिक शिक्षा अनेक स्थानों पर हुई । बी० ए० सी० की परीक्षा आपने आहौर से पास की, और वहाँ आपने कुछ दिनों एफ० सी० कालेज में अधैतनिक रूप से कार्य भी किया ।

आप प्रारम्भ से ही उमदल के राष्ट्रीय कार्यकर्ता रहे हैं । इस कारण आपको जेल-यात्रा भी करनी पड़ी । लिखने का शौक आपसे सन १९२४ से है । इस वर्ष आपकी सबसे पहली कहानी इलाहाबाद की "सेवा" पत्रिका में छपी थी । आपने उच्च कोटि की कविताओं और कहानियों का सृजन किया है । आपकी कविताओं का संग्रह 'भग्नदूत' नाम से प्रकाशित हो चुका है, दूसरा संग्रह 'विरवप्रिया' है । 'विवर्धना', 'परम्परा', 'कोठरी की बात' आदि कई गल्प संग्रह भी निकल चुके हैं । 'रोस्टर—एक जीवनी' नाम से आपने एक उपन्यास भी लिखा है ।

दीगता था कि मोहेमर मादय का अकम्मानु आ जाना उसे एक दम अनधिकार प्रवेश मान्य हो रहा है ।

मोहेमर मादय देहली के एक कालेज में प्राचीन इस्लाम और पुरानकर के अध्यापक है । वे उन भोले-भे लोगों में से हैं, जिनका पैरा और मनोरञ्जन एक ही है—मनोरञ्जन के लिए वे पुरानकर की ओर ही जाते हैं । यहां कुम्हू पहाड़ की सुन्दर उपरपहाड़ों में भी वे यही सोचने लग जाते हैं कि यहां भारत की प्राचीनतम सभ्यता के अवशेष उन्हें मिलेंगे और हिन्दू-धर्म की शिल्पकला के नमूने और पोंगु या प्रभर या गुप्ता की मूर्तियाँ और न जाने क्या-क्या । लेकिन इनका मक होने लग भी मोन्दरों के प्रति—जीते-जागते स्पन्दन-युत राग-भंगुर मोन्दरों के प्रति—उनकी आँखें अन्धी नहीं हैं । बाला को यहाँ स्वर्गी देसकर, समके पैरों के पास बढ़ने करने का राहद मुनने ही उन्हें पहले तो एक हंसिनी का विचार आया, फिर सरस्वती का (यद्यपि बाला के हाथ में धीणा नदी, एक छोटी-सी झड़ी थी) उन्होंने अपने स्वर को यथामग्नय कोमल बना कर पूछा—तुम कहां रहती हो ?

बाला ने उत्तर नहीं दिया, समझमू दृष्टि से उनकी ओर देखकर जल्दी-जल्दी पहाड़ी पर चढ़ने लगी ।

मोहेमर मादय मुस्कराकर आगे चल दिये । बालिका का भोलापन उन्हें अच्छा लगा । सोचने लगे, कितने सीधे-सादे सरल स्वभाव के होते हैं यहां के लोग । प्रकृति की सुन्दर गोद में खेलते हुए उन्हें न चिन्ता है न खटका है न लोभ, न लालच

गावे भी थे, लेकिन आत इम जगह पेड़ पर लगे हुए कमीर
तनों को देखकर गहोंवर गुरा हो गई। और इसमें भी
अधिक गुरी हुई इम बाग में कि गन्ध और गन्ध और गन्ध
उम विपुल राशि का न कोई रसक देखने में आता है, न दण्ड
के लिए बाढ़ तक लगाई गई है। यहाहा गन्धगा के प्रति जगह
आदर-भाव और भी बढ़ गया। क्या जगह में इम तरह बग
रह सकता है ? तनों के कभी पकने का जीवन न आता। और
नहीं तो खुल-कानेजी के लड़के ही टिपूदल को तरह आकर सब
माफ कर देंगे और जितना गाने नहीं कतना बिगाड़ दत। यहा
कोई बाग लगावे तो दम-गन्ध भोजनगिरे लड़ेन बढ़ेगा
रकमे और फिर भी गुरी और जेन की-मी दीवार लड़ी को
कि कोई लुक-छिपकर न ले भागे, तब कही जाकर चेन में रा
सके। और यहाँ—यहाँ बाग की सीमा बनाने के लिए एक न
का जंगल तक नहीं है। पेड़ों के नीचे जो लम्बी-लम्बी पहाई
घाम लग रही है, वही राम्ने के घाम आकर रह जानी है वही
तक बाग की सीमा समझ लो। यहा लो—

प्रोफेसर साह्य के घाम ही धम्म में बुद्ध गिरा। उन्होंने
धीरकर देखा, उन्हें आने देग एक लड़का पेड़ पर से कूदा है और
उसकी अपूर्वा आद में छिपने का प्रयत्न कर रहा है। उम
हाथ में दो सेब हैं जिन्हें वह अपने कटे हुए भूरे कोट से किम
गरह छिपा लेना चाहता है।

“उमकी भेपी हुई आगे और चंदरा माफ रह रहा था।
वह खोरी कर रहा है।

प्रोफेसर साहस एक गांव के पास आ पहुँचे । अनुमान से उन्होंने जाना कि यह 'मनाली' गांव होगा और उन्हें याद सारा कि यहां पर एक दर्शनीय प्राचीन मन्दिर है । गांव के लोगों से पता पूछते हुए ये मनु के मन्दिर में पहुँच ही गये । मन्दिर छोटा था, सुन्दर भी नहीं था, लेकिन मंसार-भर में मनु का एकमात्र मन्दिर होने के नाते यह अपना अलग महत्त्व रखता था । प्रोफेसर साहस कितनी ही देर तक दृष्टक उसकी ओर देखते रहे, यहां तक कि दहेली पर बैठे हुए बूढ़े पुजारी का ध्यान भी उसकी ओर आकृष्ट हो गया; आने-जाने वाले तो सैर देखते ही थे ।

प्रोफेसर साहस ने आनन्दित हृदय से पूछा—आम-वास और भी कोई मन्दिर है ।

पास खड़े एक आदमी ने कहा—नहीं बाबूजी, यहां कहीं मन्दिर ।

यहां मन्दिर नहीं ? अरे भले आदमी, यहां तो सैकड़ों मन्दिर होने चाहिए । यहां पर—

बाबूजी, यहां तो लोग मन्दिर देखने आते ही नहीं । कभी-कभी कोई आता है तो यह मन्त्रिस्थि का मन्दिर देख जाता है, यस और तो हम जानते नहीं ।

पुजारी ने खँसते हुए पूछा—कौन-सा मन्दिर देखियेगा बाबू ?

कोई और मन्दिर हो, आम-वास के सब मन्दिर-मूर्तियां मैं देखना चाहता हूँ ।

गम, पूत-रक्त से स्नान करके अपना देवी मौन्दर्य निगारा हो और अब कितने घरों में इन रंगों हुए कीड़ों की लम्बी-लम्बी जिह्वा मुँहों की ग्लानि-जनक गुरगुराहट मह रही होगी—
 एक, देवस्य की किम्वी उपेक्षा ! मानव नभर है, वह मरने और उमकी अस्थियों पर कीड़े रेंगे, वह समझ में आता लेकिन देवता... पत्थर जड़ है। उमका महसूस कुछ नहीं ! लेकिन भूति तो देवता की है, देवस्य की, चिरन्तनता की निराली तो एक भावना है, पर भावना आदरणीय है। क्या यह मूर्ति पड़े रहने के योग्य है ? इन कीड़ों के लिए जिनके पास अन्न दिस नहीं, पूजने को हाथ नहीं, देखने को आँखें नहीं, छूने स्वप्न तक नहीं, केवल टटोलने को ये हिलती हुई गन्दी हैं— यह मूर्ति कहीं ठिकाने-से होती—

न जाने क्यों प्रोफेसर साहब ने एकाएक मन्दिर-द्वार हटकर चारों ओर घूमकर देखा, फिर देखा, न जाने क्यों अ पास निर्जन पाकर आश्चर्य की मास ली, और फिर आ खड़े हुए।

मूर्ति गणेश की भी सुरी नहीं, लेकिन वह उतनी पु नहीं, न उतनी सुन्दर शैली पर निर्मित है। पीतल की मूर्ति कभी वह बात आ ही नहीं सकती जो पत्थर में होती है। की उस मूर्ति को देखने-देखते प्रोफेसर साहब के हृदय स्पन्दन-गति तीव्र होने लगी—इतनी सुन्दर जो भी वह। वे आगे बढ़कर उसे उठाने को हुए, लेकिन फिर उन्होंने ब काँककर देखा, पर चहा कोई न था, कोई आना ही नहीं

आरम्भ हो गये थे। कहीं-कहीं कोई मधु पीकर अघाया हुआ मोटा-सा काला भौंरा प्रोफेसर साहब के कोट में टकरा जाता था, कभी कोई तितली उनका मार्ग काट जानी थी। सूर्य को पूरा लाल हो गई थी—ये सब अपना-अपना ठिकाना खोज रहे थे। प्रोफेसर साहब भी अपने ठिकाने की ओर जा रहे थे। उनका हृदय आह्लाद से भर रहा था। उनका पहला ही दिन कितना सफल हुआ था ! कितना सौन्दर्य उन्होंने देखा था—और कितना सौन्दर्य, बहुमूल्य सौन्दर्य उन्होंने पाया था। कुल्लू का अनिर्वचनीय सौन्दर्य ! यास्तव में यह देवताओं का अग्रज है...

उस समय प्रोफेसर साहब के भीतर तो कुल्लू-प्रेम काई नहीं, मानव-प्रेम का—मंसार-भर की शुभेच्छा का रस उमड़ रहा था, उसकी बराबरी कुल्लू के रस-भरें सेव भी क्या करते ! प्रोफेसर साहब की स्नेह उड़ेलती हुई दृष्टि के नीचे ये सेव मानो अर्धपक कर और रस से भर जाते थे, उनका रंग सुद्ध और लाल हो जाता था। कितने रम-गद्गद् हो रहे थे प्रोफेसर साहब !

सेव के उद्यान से फिर कहीं धमाका हुआ। प्रोफेसर साहब ने देखा—एक लड़का उन्हें देखकर शास्त्रा से वृद्धा है, उसके कूदने के धक्के से फलों की लड़ी हुई शास्त्रा भी टूटकर आ गिरी है।

प्रोफेसर साहब ने रोख के म्बर में कहा—क्या कर रहा है !

लड़के ने सहमकर उनकी ओर देखा—वही लड़का था ! हाथ का थोड़ा सा ग्वाया हुआ सेव वह कोट के गुनूबन्द के भीतर छिपा रहा था।

प्रोफेसर साहब के मन में आग लग गई। लपक कर बालक

सीमर होती गई । जब ये आधी की तरह गांव में घर जाता हुआ मरयेक व्यक्ति कुछ विराम से उनकी ओर और उन्हें ऐसा लगता कि ये उनकी छाती की ओर ही है, जैसे उस काले ओवरकोट की ओट में छिपी हुई है, को, और उससे पीछे भी मोमोसर मादस के हृदय में पड़े पाप को ये खूब अच्छी तरह जानते हैं ।

अंधेरा होते-होते ये मन्दिर में पहुँचे । क़िवाड़ पड़ पटककर उन्होंने मूर्ति को यथास्थान रखा । लौटकर चलने लगे तो आस-पास के कुछ अंधेरे में और भयानक हो गये । उन्होंने फिर सुझाया कि ये एक निधि को नष्ट कर रहे हैं, जानें क्यों उनके मन में शान्ति उमड़ आई । उन्हें पता लगता दुनिया बहुत ठीक है, बहुत अच्छी है ।

मृत

तारा के पाम विपदाओं के मिठा और कोई सम्पत्ति न थी। वह अनाथिनी थी, विधवा थी, अन्न और वस्त्र के अभाव में जीवन बितानेवाली एक मजदूरिन थी; पर उसका हृदय महासागर की तरह गम्भीर और आकाश की तरह विस्तृत था। किन्ने उसके चेहरे पर कभी विषाद की छाया तक न देखी थी। कर्म उसने किसी के आगे हाथ नहीं फैलाया था। जीवन की लड़ाई से चकता कर कभी उसने निराशा की आहें न मरी थी। जि परिस्थिति में पड़ कर कायर लोग आत्म-हत्या कर लिया कर हैं वसी परिस्थिति में रह कर वह अधिक से अधिक दिनों उ जीने की कामना किया करती। क्यों ? इस लिए कि उस जीवन का एक उद्देश्य था। वह चाहती थी कि अपने इकलौ पुत्र दयानिधि के जीवन का पूर्ण उत्कर्ष देख कर उसकी श हो। मर कुत्र भूल कर वह उसी के जीवन-निर्माण में लगी थी। यही उसका धन था। इसी धन की साधना में वह दिन रात इषी रहती थी। इसी साधना ने उसका कर्तव्य-शक्ति अटुट बना दिया था। इसी कर्तव्य-शक्ति के सहारा वह जीव-संपादन में खीरतापूर्वक लड़ रही थी।

मजदूरी करके वह अपने घंटे को पटा रही थी। आप भूखी रह जाती, पर दयानिधि का दिन म तीन घण्टा अवश्य मिलाती।

दयानिधि लट्टेय की परीक्षा दे रहा था। अभी दो-तीन परचे बाकी थे। सब का विश्वास था कि वह प्रथम श्रेणी में तो पास होगा ही, साथ ही समूचे प्रान्त के विद्यार्थियों में प्रथम रहेगा और उसे बड़े विषयों में विशेषता भी मिलेगी। पर वह विश्वास अपना सुझावा न देना सका, भरी जवानी में झग गया। स्कूल के प्रधानाध्यापक ने उस दिन देखा कि दयानिधि परीक्षा-भवन में नहीं है। परचे खंड लुके थे। वे दौड़ कर दयानिधि के घर पहुंचे। वहां जाकर देखा, वह अपने मा की सेवा कर रहा है। उस बेचारी को उस समय देखा हो गया था और वह बेचैनी में तड़प रही थी।

प्रधानाध्यापक ने घबरा कर कहा—तुम परीक्षा देने जाओ, मैं इनके पास एक आदमी भेज देता हूं।

दयानिधि ने आंखों में आंशु भर कर मिर हिला दिया, जिस का अर्थ था—नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता।

अपनी, हमारी और स्कूल की प्रतिष्ठा बचा लो।

प्रधानाध्यापक ने कहा—जाओ तुम परीक्षा दे जाओ, मैं यहा रहता हूं।

जी, नहीं—दयानिधि आंखों में आंशु भर कर हड़ता पूर्वक बोला—“जिस मा की बदौलत मैं यह प्रतिष्ठा बचाने लायक हो सका हूं, उसे उस समय पल भर के लिए भी नहीं छोड़ सकता। यह प्रतिष्ठा फिर कभी बचा नता—इस समय तो मुझे अपनी मा की बचाना ही चाहता हूं।

राजा साहब के महलों में तो क्या, स्वर्ग में भी दुर्लभ है ! मुझे कमी किम् चीज की है ? धन के लोभ में पड़ कर मैं नज़्मों साँ-
साप के साथ स्नेह का ढोंग करूँ, यह तो इस जीवन में मुझ में होने का नहीं । मोल मांग कर खाऊँगा, भूखो मरूँगा, पर इस भोंपड़ी को छोड़ कर, तुम से अलग हट कर, कहीं न जाऊँगा ।

गर्भ और उल्लास से तारा का अन्तस्तल नाच उठा । कमलें घेरे की छाती से लगा लिया और गद्गद् होकर कहा—राजा साहब ! ऐसा सपूत भला मैं किसी को कैसे दे दूँ ?

राजा साहब निराश होकर लौट आये । रह-रह कर उनके मन में उठ रहा था—आह ! अगर मुझे भी भगवान् एक देवा हो सपूत दे देने !



अपना-अपना भाग्य

बहुत कुछ निर्देश्य घूम घुमने पर हम मड़क के किनारे की बेंच पर बैठ गये ।

नैनीताल की सन्ध्या धीरे-धीरे उतर रही थी । रुंद के रंग-से, भाप-से बादल हमारे सिरों को छू-छूकर बेरोक घूम रहे थे । हलके प्रकारा और अंधियारी से रङ्ग कर कभी वं बाले शीखने, कभी सफेद और फिर खरा देर में अरुण पड़ जाते, जैसे हमारे साथ खेलना चाह रहे थे ।

पीछे हमारे पोलो का मैदान फैला था । सामने अंग्रेजों का एक प्रमोद-गृह था, जहां मुहायना, रमीला याजा बज रहा था और पार्श्व में था वही सुरम्य अनुपम नैनीताल ।

ताल में किरितियां अपने सफेद पाल उड़ाती हुई, एक-दो अंग्रेज यात्रियों को लेकर, इधर से उधर खेल रही थी और कहीं कुछ अंग्रेज एक-एक देवी सामने प्रतिस्थापित कर अपनी मुई-सी शक्ल की डोंगियों को मानो शर्त बांध कर सरपट दौड़ा रहे थे । नदी-किनारे पर कुछ साहब अपनी बर्फी पार्सी में डाले धैर्य के साथ एकाग्र होकर मछली-निधन कर रहे थे ।

पीछे पोला-लान्ग म बच्चे किलकारिया भरते हुए हाकी खेल रहे थे । शोर, मार पीट, गान्नी गलौच भी जेम खेल का अंश था । इस तमाम खेल को इतने सज्जन का उद्देश्य बना व बालक

में बेचैन हो रहा था। मस्टपट होटल पहुँच कर, इन से छुट्टी पा, गरम बिस्तर में झिपकर सो रहना चाहता था। साथ के मित्र की सनक क्या उठेगी और क्या क्या कुछ ठिकाना है ! और वह कैसी, क्या होगी कुछ अन्दाज है ? उन्होंने कहा—आओ, जरा यहाँ बैठें।

हम उस टपकते कुहरे में रात को ठीक एक बजे, किनारे की उस भीगी, बर्फीली, ठण्डी हो रही सोड़े की रैल पर बैठ गये।

पाँच-दस-पन्द्रह मिनट हो गये। मित्र के उठने का इरादा मालूम हुआ। मैंने मुँकला कर कहा—चलिए भी चरे, जरा बैठो ..

हाथ पकड़ कर जरा बैठने के लिए जब जोर से बैठा लिखा गया, तो और चारा न रहा—सनक से छुटकारा पाता आस न था, और वह जरा बैठना भी चारा न था।

घुपघाप बैठे तङ्ग हो रहा था, कुछ रहा था कि मित्र अचानक बोले—देखो, वह क्या है ?

मैंने देखा, कुहरे की सफेदी में कुछ ही हाथ दूर से एक काली-सी मूर्ति हमारी तरफ बढ़ी आ रही थी। मैंने कहा—होगा कोई।

तीन गज की दूरी से दीम्ब पड़ा, एक लड़का, सिर के बड़े बड़े बाल झुजलाता हुआ चलता आ रहा है। नंगे पैर हैं, न सिर, एक मैली-सी कमीज लटकाये है।

फिर नौचरी करेगा ?

हो ।

बादर चलेगा ?

हो ।

आज क्या खाना खाया ?

कुछ नहीं ।

अब खाना मिलेगा ?

नहीं मिलेगा ।

थोड़ी सो जायगा ?

हां. . ।

कहा ?

बढ़ी बढ़ी ।

इन्हीं कण्ठों में ?

आशक फिर आशों में खोल कर मुक गया रहा ।
मानों खोलती थी—गह भी केसा मूर्ख प्रभ है ।

मा बाप हैं ?

हां ।

कहा ?

ग-उह बोम उर गाव म ।

तु भाग आया ?

हां

कहा ?

ज-उह उर गाव म । —हां म । आया बढ़ी

मानिए तो, यह लड़का अच्छा निकलेगा।

आप भी...जी, वम सूष हैं। ऐसे-मीरे को नोच लिया जाय और अगले दिन यह न जाने क्या-क्या हो सम्भव हो जाय।

आप मानने ही नहीं, मैं क्या करूं।

मानें क्या खाक ?—आप भी...जी अच्छा मरहाक का हैं। अच्छा अब हम मोने को जाने दें।

और वह बार कपड़े रोश के किराये वाले कमरे में व मगहरी पर मोने मटपट चले गये।

(३)

करीब साढ़स के चले जाने पर, होटल के बाहर कप मित्र ने अपनी जेब में हाथ डालकर कुछ टटोला, कुछ मित्र भाव से हाथ बाहर कर वे मेरी ओर देमने लगे।

क्या ? ?—मैंने पूछा।

उम्मे खाने के लिए कुछ देना चाहता था—खेचोटी दे मित्र ने कहा—सगर कम-कम के मोट हैं ?—

नोट ही शायद सर पाग हैं—कहा।

मजसूम भरी सब में भी नोट ही व हम खेचोटी के कहने लगे जबकि क नाम काग काग में कपटल उठने के लड़ाई व लड़ाई

लड़ाई लड़ाई

लड़ाई लड़ाई

लड़ाई लड़ाई

उदास होकर मित्र ने कहा—स्वार्थ !—जो कहो साधारण करो, निहुराई कहो—या बेहयाई ।

दूसरे दिन नैनीताल-स्वर्ग के किमी काले गुलाम पगु के दुलार का यह घेटा—यह बालक, निश्चित समय पर हमारे 'होटल-डि-पथ' में नहीं आया । हम अपनी नैनीताली मौर मुगी-मुशी मानस कर चलने को हुए । उस लड़के की आम लगाये घेंटे रहने की जरूरत हमने न समझी ।

मोटर में सवार होने ही यह समाचार मिला—पिछली रात, एक पहाड़ी बालक, मड़क के किनारे—वेड़ के नीचे छिपकर मर गया ।

मरने के लिए उसे यही जगह, यही दस बरस की उमर और यही जाने पियकों की कमोश मिली । आरमियों की दुनिया ने कम यही उपहार उसके पास छोड़ा था ।

पर बनलनियारों ने बतलाया कि गरीब के मुंह पर, छाती, मुट्टियों और पैरों पर, बरक की हल्की-सी आदर पियक गई थी । मानो दुनिया की बेहयाई दुकान के लिए प्रकृति ने राश के लिए मकेंद और टमके कफन का प्रयत्न कर दिया था ।

मर मृता और माया—“अपना-अपना भाग्य” ।

अब ? भिक्षुगन मन-ही मन मोचने लगा—“अब ?”

आवाज फिर आई—

अरे बोलता क्यों नहीं । कौन मृत की तरह मर रहा है ?

हम हैं भैया ! भिक्षुगन ।

भिक्षुगन !—क्रोध से गर्ज कर प्यादे ने कहा—भिक्षुगन-लाट साहस के नाती ही तो हैं । दो पंटे से पुकार रहा हूं, बोलता ही नहीं है । जा, जल्द रुपये ले आ, हम लोग शाम ही से तेरे यहां बैठे हैं ।

जरा पाम आकर भिक्षुगन ने देखा, जमींदार के दो प्यादे थड़े-थड़े ढंडे लिये, यमदूतों की तरह उनकी ओर घूर रहे थे । उसने कहा—

बाबू, सरकार से हाथ जोड़ कर हमारी ओर से कह देना, इस साल हम सब की फसल मारी गई है । हम सब उजड़ गये हैं । अभी मालगुजारी देने को हमारे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है ।

फूटी कौड़ी भी नहीं है !—तमक कर एक प्यादे ने पूछा—ससुरे, तब खाते क्या हो ? खाने के लिए रुपये हैं और सरकार को देने के लिए नहीं ? सीधे से, थम, जाकर लेते ही आओ ।

नहीं बाबू, मर कहना है । भगवान जानते होंगे । इस धरत गरीबी ने हमें बुरी तरह अपने चंगुल में फसा रखा है । सरकार ईश्वर है । कह देना महीना-पट्टह दिन मर रहे । हम बेईमान नहीं हैं । एक-एक कौड़ी मर रहे ।

इस बात को वह खूब समझता था कि, इनमें बागुद्ध में पाना असम्भव है। अतः वह चुप रहा। पर, ठाकुर मादरल माननेवाले थे। शायद वे कभी अखबारों को और कोमल, प. यहादुरपुर के प्यादों की उपस्थिति ने उनके यक्ष्य में बाग है

क्या है हरनाम ? यहादुरपुर वालों ने मातगुशरी भ कर दी ?

सब ने तो—आवश्यक से अधिक नम्रता और ब लूसी दिखाते हुए हरनाम ने कहा—सब ने तो अदा कर है, पर, एक...

एक ने अभी नहीं की ? वह कौन बदमाश है ? उसे ल लाये हो ?

अभी नहीं हुआ ! इस बार यहादुरपुर में कसल सा हो जाने की आम शिकायत है। तिस पर भिक्षजन के सेठ में से सब से शराब कसल हुई। वह गरीब भी—।

बदमाश ! जान पड़ता है उस साले ने तुम्हें कुछ घूम दे है। मुझे भिक्षजन की शरीबी सुनाने बला है। किसी की शरी से मेरा क्या सरोकार। सरकार तो मुझे शरीब समझ कर दो दिन बाद मातगुशरी नहीं लेवी। एक दिन की देर हो जाने में सुमाने का डर रहता है। फिर मैं भिक्षजन की शरीबी क्यों दूँ ? क्या उसके सेत में एक पीधा भी नहीं उगा ?

बहुत डरने-डरने हरनाम ने कहा—

उगा क्यों नहीं हुआ ? पर, इतना नहीं उगा कि वह साब भ भजन बाल बचो ॥ मिलाव भी और ठीक वक्त पर अपनी

ने रहा था। इसीमे लापार होकर, मैंने अपने प्यारे बैजों से कल पेण दिया और महाजन की भरपाई कर दी। अब बैज कहाँ है ? मेरे बैल कैसे तैयार थे मुमिया बाबा ! मैं पाँडे हुए न आता, पर उन्हें मझे में ररता था। अनबोलने जानरो के बलपना बाल-बमों के आगे आता है। इसी से मैं उन्हें घड़े मुग में ररता था। फिर, बैल ही हमारे महादेव बाबा हैं। वही सब जाता है।

बहने-बहने भिषमन ने सोचा कि महादेव बाबा (बैज) घर में बने गये, तो जरूर कोई-न-कोई अनर्थ होने बाबा होगा। नही तो ये क्यों जाने ? हमने छयमवा-पूजे स्वर से कहा—

मुमिया बाबा ! हमनों के लिए हमने अपने महादेव बाबा को—दवता को—कल पेण दिया है। अब बैल में पाम बाबा है ?

इस समय भिषमन की उदास भावा होकर जोर मारते थे कि मैं बैज को घर में ररता हूँ।

मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ? मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ? मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ?

मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ? मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ?

मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ? मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ?

मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ? मैंने कहा कि मैं बैज को घर में ररता हूँ। अब बैल में पाम बाबा है ?

भिक्षुगन की स्त्री और बुद्धा माता बैठ कर चक्की चला रही थी। बुद्धा के हाथ का मांस, चक्की के प्रत्येक चक्कर के अंत में, बड़े छोर में और बड़ी देर तक कांपता था। फिर भी, वह चक्की चला रही थी। भिक्षुगन की स्त्री ने घंघट खींच कर अपना मुंह ढकना चाहा, पर उसकी धोती इतनी बड़ी कहाँ थी जो उसका मुँह ढक सकती। अभागिन ने सारे लज्जा के अपना मुँह नीचे झुका लिया। द्वारका ने बुद्धा से पूछा—

माँ, इननी शूद्रा होने पर भी तुम चको चलानी हो ?

हां थेटा ! हम सारीय लोग जन्म भर काम करने हैं। हमारे लिए जयानी खुदाया एक ही है।

मा, बहुत कम—यह कौन जाना है ? इतना कम ? तुम लोग इतना ही योग सकनी हो ?

नहीं थोड़ा इतना ही मिला है। जिस दिन से तुम्हारे पिता ने हमें लुटवा लिया है, उसी दिन से हम लोग यहाँ यहाँ में अन्न खाकर मोग कर काम चला लेते हैं। जो घर है, वहीमें भूमि ली रहने वाली। हमारा पापा एक भी नहीं मानता। अब तो वे सब भी मिलाए जाते हैं। हमारा इन्तें है।

बादता है ।

भिक्षुन । उमे अभी ले आओ ।

भिक्षुन आया । द्वारकानाथ ने देखा कि उसकी बुरी हाल थी । बिलकुल मूय गया था । ऐसा जान पड़ता था मानो मर्दाने में कुछ आया नहीं है । द्वारका ने पूछा—

कया हाल है भाई भिक्षुन ?

मरकार ।—आंभी में आंभ भर कर भिक्षुन ने कहा— मुझे अपने यहां कोई नौकरी दिला दोजिए । हमारा परिवार तीन दिन से उपवास कर रहा है । बल कर देव आइए, बच्चे मां भूय के छटपटा रहे हैं, बूढ़ों मां का सुरा हाल है, मेरा घर नष्ट हो रहा है । कोई नौकरी दिलाइये; नहीं तो हम सब मर जायेंगे ।

द्वारका ने कहा—आज से तुम हमारे यहां नौकर हुए । पंद्रह रुपए मिलेंगे । इतने से तुम्हारा काम चल सकेगा ।

बहुत है मरकार । ईश्वर आपको मुसां रखे । इतने से जान बख जायगी । अब तक दूसरी कमल नेवार नहीं होनी, तभी तक सब लच्छांके हैं । फिर तो, भगवान की दया से मुझे नौकरी मिल करनी होगी । दिवानों का काम नौकरी से नहीं चल सकता ।

भिक्षुन की एक महान की वनछाह परमां दिवा कर इनके साथ ही द्वारकानाथ भानर से बाहर निकला । न जाने कबो इस की इच्छा बढ़ाई । न जाने कबो समन अपना जोधा मगवाया ।

—२— भिक्षुन । नई । न जाने कबो इस की इच्छा बढ़ाई । न जाने कबो समन अपना जोधा मगवाया ।

मां, यहाँ क्यों आई ? यहाँ कौन माना देगा ?

मैं दूंगी बेड़ा—बह कर उमने रामू की गरदन अपने हाथ में पकड़ कर उसे अपने सामने खींचा । साथ ही, कुछ मोचर भी खींची । इस बार सुभी ने कहा—मां भूख ! फिर वहीं भूख इन्ध्याशिनी, पिशाचिनी भूख ! माता ने पुत्र को कन्धों से झटक कर जमका मेंदू चूमा । फिर बोली—

बेड़ा, मैंने तुझे बहुत कुछ दिया । गुलाब सा मेरा हाथ दिनों में भूख में लपक रहा है । अब तुझे माने की तकलीफ न होगी मेरे साथ ।

रामू को जमका माना ने अपने हृदय में छेदा कर मां बेड़ाया । उसके दोनों हाथ रामू की गरदन की ओर बढ़े । हाथों की आकृति वाक्य उमने बोली—मां तुझ दे रही है ।

क्या है मां ? माना ?

हाँ बेटा ! जोर से पकड़ कर, दुबले-पतले पुत्र की गरदन पर अमर्त्यमयी मां ने गेट्ट दिया । दोनों आँखों में लगी कि यह मां भी न ले सका । जग-भर बाद वासाव के भीतर में आवाज आई—दयाव !

दुःख का जो वासाव को कर आन गुलाब वही वह जो
को जोन कर न लीक वह मां के हाथ का एक जमका में
कला गलक कर न लीक वह मां के हाथ का एक जमका में
को जोन कर न लीक वह मां के हाथ का एक जमका में

को जोन कर न लीक वह मां के हाथ का एक जमका में
को जोन कर न लीक वह मां के हाथ का एक जमका में

ज्वालादत्त शर्मा

"मध्यमवाद" और आदर्शवाद दोनों का सुन्दर सम्मिश्रण कला का निर्वाह करनेवाले कलाकारों में शर्मा जी का नाम उभरेगा है। प्रेमचन्द जी ने अपनी अत्यंत प्रतिभा द्वारा कहानी-संसार में मिनीत धारा का सूत्रपात किया था उसके प्रमुख लेखकों में शर्मा जी हैं। उनकी तरह आपकी शैली व्याख्यात्मक है। प्रभाव के लिए कथनांशों की व्यंजकता पर पूरा-पूरा विश्वास नहीं रखते और वादकों की सदृश्यता धारण अभिकता पर आप बहुत कुछ ध्यान आदते हैं। अतः कलाकार के साथ-साथ आप सूक्ष्म रूप में सुलभ के रूप में भी चलते हैं। आपका साहित्यिक जीवन सन् १९३१ प्रारम्भ होता है। आपकी पहली कहानी उस वर्ष "सरस्वती" निकली थी।

प्रमुख कहानी आपकी कहानी-कला का सरखा समूत है।

और रहने के मकान में—जायदाद के लयरोग—कर्म के कीटाणुओं ने प्रवेश कर लिया था। रामप्रसाद ने अपनी कन्या चमेली के विवाह में शहर के मूर्ख और निष्ठुर आदमियों के मुंह में चिकनी-चुपड़ी बातें सुनने के लिए बहुत रुपया खर्च किया था। विवाह के बाद, कोई एक सप्ताह तक, पञ्चन की सुगन्धि के साथ-साथ रामप्रसाद की इस मूर्खता-व्यवहारता की वृत्ति भी मुद्दले में सर्वत्र, और शहर में बस फैल रही थी। रास्ता कचौरी, मोतीचूर के लड्डू, गोल बाबूर, कुरकुरी इमरती और ममालेदार तरकारियों के साथ-साथ शर्मकने हुए "इन्दुमम उज्ज्वल" स्वरान की दक्षिणा की जहाँ-तहाँ होनी थी। किन्तु रामप्रसाद के घर की उम्र शान्दनी में, उसके विमल घर की सफेद चार में, कर्मक न ही, कोई घट्टा न हो, मो जान नहीं। ममालोषक, जिन्होंने अयोध्या में कई दिन पहले से अन्न करने रहने के कारण, घुरी तरह रास्ता कचौरी और मिश्री सुभायम मिठाइयों का धर्म किया था, अपने दुःख प्रसूतिदल स्वभाव में मग्न होकर बास की रात निष और रामप्रसाद की दूध की गंगा में विष मिश्रित लगे। कहता था—कचौरियों में मोहन कम डाला गया और बताया था कि शाक में मोन उबाला हो गया था। कोई सर की बनी की राम, तो चाइ बगन की बाकी की मग्न का। मनलव यह कि रामप्रसाद की मूर्खता का करने करने न। प्रकाश का का कम न था। किन्तु यो

करते थे। उनके हिसाब से यदि राधाचरण न पड़ता तो उन्हें श्रृंगी न बनना पड़ता। छोटी-छोटी बातों पर रामप्रसाद एक-परग से कहने—अभी तुने हमारी क्या सेवा की है। एक माल में पचास रुपये महीना कमाने लगा है। मुझे देना, तेरे पदार्थ के कारण ही तयाह हो गया। इतना देना हो गया।

गुरील राधाचरण अपने मूर्ख चाचा की बात का पत्तर न देता था। नीची गर्दन करके यह सब कुछ गुन लेता था।

राधाचरण की शुरु में चाचा और चाची को बेशक दुःख हुआ; पर दुःख की कम तीव्र आग में जलते हुए भी रामप्रसाद ने राधाचरण के कारण कर्जदारी का शिक करने की प्रवृत्ति से बड़े धन में सुरक्षित रखा।

२

शोक की प्रबल लहरों में बही जानेवाली रामप्रसाद-व्यवस्था ने अपने भेषों का सहारा पाकर बहुत कुछ शक्ति प्राप्त की। आशा की वर्षा के बाद जितम तरह मूर्ख और अविश्वसनीय हो उठता है, उसी तरह शोक-सागर में भ्रमण करते रामप्रसाद-व्यवस्था का कठोर हृदय और अविश्वसनीय बन गया। अब वे बात-बात में कहने लगे—राम, हमें मार गया। वह हमारा भला ही नहीं था। वह तो हमें बुरा बनाने आया था।

रामप्रसाद की बातों से रामप्रसाद की प्रवृत्ति और अधिक बढ़ गई। वह रामप्रसाद की बातों से और अधिक अविश्वसनीय हो गया। वह रामप्रसाद की बातों से और अधिक अविश्वसनीय हो गया। वह रामप्रसाद की बातों से और अधिक अविश्वसनीय हो गया।

कभी न भूलता था। उसके आखिरी शब्द—“प्रिये पार्वती—” आज भी उसके कानों में गूँज रहे थे। उस कातर भाव की शब्द-हीन भाषा का मर्म भी उसने ठीक-ठीक समझ लिया था। चाचा-चाची का कठोर स्वभाव और पार्वती के मायके की शोचनीय अवस्था ही उस कातर भाव का प्रधान उपादान थीं।

पार्वती-हिन्दी-मिडिल पास थी। राधाचरण ने बड़े आप्रह्म से उसे अंग्रेजी भी पढ़ाई थी। उसका विचार था कि वह उससे मैट्रिक परीक्षा दिलायेगा; किन्तु उसकी अकाल मृत्यु ने, बहुत सी अन्य बातों के साथ, इस विचार को भी कार्य में परिणत न होने दिया।

पति की मृत्यु के बाद अभागिन पार्वती को पुस्तक छूने का अवसर ही न मिलता था, घर में उनकी कोई मत्ता ही न थी। सास राधाचरण की मृत्यु का कारण उसे ही समझती थी। पार्वती अन्न पीमती है, चौका-बरतन करती है, भोजन बनाती है; किन्तु फिर भी मास-मसुर की महानुभूति का पात्र नहीं बनती। फिर भी उनके मुँह से कभी मोठो बात नहीं सुनती, सुनती है कर्जदारी का वारण, अपने दुर्भाग्य की गाथा और कभी-कभी गूढ़ प्रेम के परदे में पति की निन्दा।

पार्वती को कुटिलता-पूर्ण संसार में महानुभूति का चिह्न कही दिखाई न देता था। उसके एक चचेरा भाद था, वह कही चपरामी था, पर था विवाहित। इसलिए सारीबी के मेवे—सन्तान की बहुतायत—से माला-माल था। अत्यन्त गर्मी पड़ने के बाद वर्षा होती है। बहुत तप चुकने पर धराधाम जल की

ने निरसन्देह उनकी मानसिक क्लृप्तता को बहुत कुछ दूर कर दिया ।

काल-भगवान् किसी की उपेक्षा नहीं करते । सूर्य के रथ का घुरा कभी नहीं टूटता । काल-भगवान् के प्रधान सहचर सूर्यदेव सुखी, दुखी—सभी—को पीछे छोड़ते हुए रथ बढ़ाये चले ही जाते हैं । शनिरचर की रात को मुखदयाल—दैन्य और दारिद्र्य की मूर्ति मुखदयाल—आ गया । बहान को गले लगाकर वह बहुत रोया । दूसरे दिन प्रातःकाल की ट्रेन से वह पार्वती को लेकर घर को रवाना हो गया ।

पार्वती ने चलते समय केवल अपने पति की पुस्तकों का एक ढ़ङ्ग अपने साथ लिया । बाकी न कोई खेवर और न दो धोतियों को छोड़ कर कोई कपड़ा । भरा हुआ घर, जो उसके लिए पहले ही खाली हो चुका था, उमने भी ग्वाली कर दिया । चलते समय सास ने ऊपरी मन से अल्द आने के लिए कहा और श्री-जन-मुलभ अभ्यु-वर्षण का परिहास भी दिखाया । पार्वती ने निष्कपट मन से जिस समय साम के चरण हुए, उस समय गरम-गरम आतुओं की कुछ बूंदों ने भी हरदेवी के चरण छूने में उसके साथ प्रतियोगिता डा ।

(५)

पार्वती के आने में मुखदयाल को गरीबी का—पर पैतृक और इमानित पक्षा—पर स्वर्ग बन गया । उसके बालक, जो निर्भयता के कारण जिला न पा सके थे वृथा पार्वती से पटन को मन्थनान का बड़ा तडको शान्ति उमने हिन्दी-

गई थी ।

चार वर्ष और बीते, पार्वती ने प्राइवेट तौर पर पहली कक्षा में बी० ए० पास किया । रायपुर के कलेक्टर की पत्नी ने अपने हाथ से पार्वती की सकेद साड़ी पर प्रतिष्ठा-सूचक मेडल लगाया । हिन्दू-गर्ल्स-स्कूल की प्रधान शिक्षयित्री (लेडी प्रिन्सिपल) के पद पर—जिसकी शोभा, उपयुक्त हिन्दू-पंढिता के न मिलने के कारण अब तक क्रिश्चियन लेडियां पढ़ाती रही थी—पंढिता पार्वती का वरण किया गया । शहर भर में पार्वती का यशोगान होने लगा । वेतन भी एकदम २५०) हो गया ।

(५)

रविवार का दिन था, स्कूल के बड़े कमरे में प्रबन्धकारिणी समिति के सभ्यों की अन्तरङ्ग-सभा हो रही थी । मेम्बर सभी स्त्रियां थी । राय रामकिशोर बहादुर की पत्नी, जो स्कूल की ऑनरेरी सेक्रेट्री थी, प्रबन्ध-सम्बन्धी अनेक विषय पेश कर रही थी । रायबहादुर की पत्नी ने कहा—अब मैं आज की बैठक का अन्तिम विषय अर्थात् स्कूल के चपरामी के लिए आवे हुए प्रार्थनापत्र पेश करती हूं । मेरी सम्मति में जिन लोगों के प्रार्थनापत्र हैं, उन्हें बिना देम्ये नौकर रखना ठीक न होगा । चपरामी बूढ़ा तो होगा ही; पर साथ ही साथ चिडचिड़ा या अधिक कमखोर भी न होना चाहिए और यह ऐसी बात है जो बिना देम्ये ठीक नहीं हो सकती । अब मैं इस विषय में आप की या बार्ड जी की (मननव या प्रिन्सिपल पार्वती से) जैसी आज्ञा हो, वैसा करूँ ।

इसलिए किसी भी नौकर की नियुक्ति के विषय में बहुत माव-धानता से काम लेना पड़ता है। स्कूल भर में केवल चपरासी का काम ही बड़े मर्द के मपुरद था, बाकी सब कामों पर भिया ही नियुक्त थी।

दस बजते बजते लेडी-प्रिंसिपल की गाड़ी स्कूल के दरामें में पहुंच गई। विभिन्न कक्षाओं की विभिन्न पंक्तियों में सजे बालिकाओं ने बड़ी श्रद्धा से प्रधानाध्यापिका को प्रणाम किया। गाड़ी से उतर कर वे सीधी आक्रिस में पहुंची। रायबहादुर की पत्नी वहां पहले ही से उपस्थित थी। प्रिंसिपल के पहुंचने पर दामी ने बारी-बारी से उन चारों आदमियों को घुलाया।

पहले आदमी को देखते ही पार्वती के विस्मय का ठिकाना न रहा। वह बूढ़ा आदमी और कोई न था—अभागा रामप्रसाद। उसे देखकर परिहृता पार्वती के हृदय में क्षण भर के लिए लज्जा का उदय हुआ। किन्तु तत्काल ही उन्होंने अपने को संभाल लिया।

सौ मील की दूरी पर आठ रुपये की नौकरी के लिए वह क्यों आया है ? मालूम होता है, उसकी सम्पत्ति और मकान आहुकार पड़ोसी सूदखोर की विशाल तोंद में समा गये हैं। रामप्रसाद के मलिन और चिंतित मुख को देखकर कमल-हृदय पार्वती के मन का अन्तस्त्वल्ल नक हिल गया। उसने दूसरी तरफ की मुह करके अनमने भाव से समझ निवारण के लिए पूछा—आपका नाम ?

रामप्रसाद पाट।

इसलिए किसी भी नौकर की नियुक्ति के विषय में बहुत सावधानता से काम लेना पड़ता है। स्कूल भर में केवल बचपानों का काम ही बड़े मर्द के सपुर्दे था, बाकी सब कामों पर बिया ही नियुक्त थी।

दम बजते बजते लेडी-प्रिंसिपल की गाड़ी स्कूल के बरामदे में पहुँच गई। विभिन्न कक्षाओं की विभिन्न पक्तियों में लड़ी बालिकाओं ने बड़ी भिन्न से प्रधानाध्यापिका को प्रणाम किया। गाड़ी में उतर कर ये सीधी आफिस में पहुँची। रायबहादुर की पत्नी वहाँ पहुँचे ही से उपस्थित थी। प्रिंसिपल के पहुँचने पर दागी ने बारी-बारी से उन चारों आदमियों को बुलाया।

पहुँचे आदमी को देखते ही पार्वती के विस्मय का डिटका न रहा। बड़ बूढ़ा आदमी और कोई न था—अभागा रामप्रसाद। उसे देखकर पण्डिता पार्वती के हृदय में सुगुं भर के लिए आँसू का ज्वार हुआ। किन्तु तत्काल ही उन्होंने अपने को संभार लिया।

सौ मील की दूरी पर आठ रुपये की नौकरी के लिए वह क्यों आया है ? मानस हाता है, उसकी सम्पत्ति और सन्तान चारुधर पदमा मृत्युधर की विज्ञात नौद में समा गये हैं। रामप्रसाद के मालिक और विगत सुख का देखकर कर्म-दुःख सहित के मन का अनुभव न कर दिया गया। हमने इसका उद्देश्य और उद्देश्य धनमन मान्य से मान्य निवर्तन के लिए है।

लेना पड़ा होगा ।

मां, केवल डेढ़ सौ रुपये !

कहते-कहते बूढ़े के कोटर-लीन नेत्रों में आंशू भर आये।

अच्छा आप बाहर बैठिए ।

बाकी तीन आदमियों में से एक आदमी चुन लिया गया ।

बूढ़ा रामप्रसाद उसी समय लेडी-प्रिंसिपल के बंगले पर पहुंचाया गया ।

आठ रुपये की नौकरी के लिए आये हुए रामप्रसाद को बंगले के नौरुओं ने जब मालिक की तरह ठहराया, तब उसे बहुत आश्चर्य हुआ ।

राम को भोजनोपरान्त पार्वती ने कहा—

आप मुझे पहचानते हैं ?

मां, आप स्कूल की बड़ी बाई हैं ।

मैं आपके भतीजे की अमागिन स्त्री हूं ।

बूढ़े की निद्रा टूट गई, उसे मूर्च्छा आने लगी । पार्वती की भतीजी शान्ति ने संभाल लिया ।

पार्वती ने बहुत चाहा कि रामप्रसाद यही रहे, पर वह किसी तरह राजी न हुआ । आत्म-ग्लानि की तीव्र अग्नि में वह अन्दर-अन्दर जल रहा था । चलने समय पार्वती ने कभी कभी दर्जन-दर्जन का वस्त्र ले लिया । फिर एक-एक हजार के नोटों का लिफाफा मकन्द करके बड़े समूह के हाथ में दिया और वह नम्रता से कहा—यह पिट्टा मां जो को न दाजिमामा के अन्तर्गत है ।

पिंजरा

शान्ति ने ऊबकर कारागृह के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और उठ कर अनमन-सी कमरे में घूमने लगी। उसका मन स्वस्थ नहीं था, लिखते-लिखते उसका ध्यान बँट जाता था। केवल चार पंक्तियाँ बह लिखना चाहती थी उससे लिखा न जाता था। भावावेश में कुछ का कुछ लिख जाती थी। छः पत्र बह फड़ चुकी थी, यह सातवाँ था।

घूमते-घूमते, वह धुपचाप सिड़की में जा खड़ी हुई। सन्ध्या का सूरज दूर पश्चिम में डूब रहा था। माली ने क्यारियों में पानी छोड़ दिया था और दिन-भर के मुरमाये फूल जैसे जीवन-दान पाकर खिल उठे थे। हल्की-हल्की ठंडी हवा चलने लगी थी। शान्ति ने दूर सूरज की ओर निगाह दौड़ाई—पीली-पीली सुनहरी किरणें जैसे दूधने से पहले उन छोटे-छोटे वृक्षों के सेल में जी भर हिस्मा-सेलेना चाहती थी जो मामने के मैदान की हरी-भरी घास पर उन्मुक्त खेल रहे थे। सड़क पर दो कमीन युवतियाँ, हँसती, चुहल करती, उधलती, कूदती चली जा रही थी। शान्ति ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा और फिर मुड़कर उसने अपने इर्द-गिर्द एक थकी हुई निगाह दौड़ाई—छत पर बड़ा पंखा धीमी आवाज से अनवरत चल रहा था। दरवाजों पर भारी पर्दे हिल रहे थे और भारी सौच और उन पर रखे हुए

लड़की मुस्करा रही थी, और उसकी आंखों में विचित्र-सी चमक थी ।

क्या बात है—जैसे आंखों ही आंखों में शान्ति ने क्रोध से पूछा ।

तनिक मुस्कुराने हुए लड़की ने प्रार्थना की—बीबीजी ! पानी लेना है ।

हमारा नल भंगी जमागों के लिए नहीं ।

हम भंगी हैं न जमार ।

फिर कौन हो ?

मैं, बीबीजी, मामने के पुजारी की लड़की ।

लेकिन शान्ति ने आगे न गुना था । उसे लड़की से बातें करने करने पिन आती थी । धोती के छोर से पानी खोतकर हमने फेंक दी ।

इस कान्ते-कसोट शरीर में दिल काला न था । और रीति ही शान्ति को इस बात का पना चल गया । राख ही पानी लेने के समय आवा के लिए गोमती आती । गली में पूर्वियों का जमान्दर था, वह उसके पुजारा का लड़की या जमागों के मन्दिरों के पुजारा या माटगों में जमान्दर है । वह मन्दिर या मराय पूर्वियों का जिनमे प्रायः सब बीबीजी जमागों का मन्दिर जमान्दर है पुजारा का कदम्ब भी लुप्त न हो । एक बार जमान्दरों की आरम्भिक के लक्षणों में ही ही और सब मन्दिरों का लक्षण ही ही है । पुजारा का कदम्ब भी लुप्त न हो । एक बार जमान्दरों की आरम्भिक के लक्षणों में ही ही और सब मन्दिरों का लक्षण ही ही है । पुजारा का कदम्ब भी लुप्त न हो । एक बार जमान्दरों की आरम्भिक के लक्षणों में ही ही और सब मन्दिरों का लक्षण ही ही है ।

शान्ति ने फिर कहा—हमारी अपनी गली में कई लोग बीमार हो गये हैं। परसों टेंड्री चमार का लड़का निमोनिया से मर गया।

तभी शाल में लिपटा-लिपटा बच्चा हल्के-हल्के दो बार खांसा और शान्ति ने उसे और भी अच्छी तरह शाल में लपेट लिया।

उसकी बात को सुनी-अनसुनी करके उसके पति ने कहा—आज येहद बढपरहेसी की है, पेट में सख्त गड़बड़ी हो रही है।

+ + +

पर आकर शान्ति ने जब लड़के को चारपाई पर लिटाया और मस्तक पर हाथ फेरने हुए उसके बालों को पिछली तरफ किया तो वह चीक कर पीछे हटी। उसने डरी हुई निगाहों में अपने पति की ओर देखा। ये सिर को हाथों से दबाये नाली पर बैठे थे।

बम्मी का माथा तो लपे की तरह तप रहा है—उमने बड़ी बटिनाई से गले को अचानक अवरुद्ध कर देनेवाली किसी चीज को बरबस रोक कर कहा।

लेकिन उसके पति को कै हुई।

शान्ति का कण्ठ अवरुद्ध-सा होने लगा था और उसकी आंखें भर-भी आई थी, पर अपने पति को कै करते देख बच्चे का श्रयाल थोड़ा बढ उनकी ओर भागा। पानी लाकर उनको कुत्रा कराया। निहाल से हा कर ये चारपाई पर पड गये पर कुछ ही लम व ड रुद्ध पर ललता हुई

शान्ति को मानूँ भी न हुआ कि यह कब घर जाती है, कब घर वालों को खाना खिलाती है या खाती है या मिठाई खाती भी है या नहीं। उसने तो जब देखा उसे छाया की भाँति बच्चे के पास पाया। कई दिन तक एक ही जून खाकर गोमती ने बच्चे की देख-भाल की थी।

+

+

+

दोपहर का समय था, उसके पति दुकान पर गये हुए थे। उम्मी को भी थय आराम था और वह उसकी गोद से लगा सोया पड़ा था और उसके पास ही कहीं पर टाट बिछाये, गोमती पुराने ऊन के घागो से स्वेटर बुनना सीख रही थी। इतने दिनों की थकी-हारी उनींदी शान्ति की पलकें धीरे-धीरे बन्द हो रही थीं। वह उन्हें खोलती थी पर ये फिर बन्द हो जाती थीं। आखिर वह जैसे ही पड़ी-पड़ी सो गई। जब वह फिर उठी तो उसने देखा, उम्मी रो रहा है, और गोमती उसे बड़े प्यार से मुरीली आवाज में थपक-थपक कर लोरी दे रही है। शान्ति ने फिर आँखें बन्द कर लीं। उसने सुना—गोमती धीमे-धीमे स्वर से गा रही थी—

आ री कको, जा री कको, जहल पको बेर
भय्या हाथे डेला, चिडैया उडे जा।

और फिर

आ री चिडैया। दो पापड़ा पकाण जा
भय्या हाथे डेला चिडैया उडे जा।

बसा गुप कर गया था। लोरी समाप्त करके उसने बच्चे

बिजली का बंटन दयाते हुए उन्होंने कहा—यहां अंधेरे में क्यों पड़ी हो। उठो बाहर बारा में घूमो-फिरो और फिर पोले—इन्द्रानी का प्रेन आया था कि बहिन यदि चाहें तो आज मिनेमा देखा जाय।

बहिन—दिल ही दिल में विषाद से शान्ति मुम्कराई और उसके सामने एक ओर काली-कलूटी-मी लड़की का चित्र मिथ गया जिसे कभी उसने बहिन कहा था। किंतु प्रकट उसने केवल इतना कहा—मेरी तबीयत ठीक नहीं !

मुंह पुलाए हुए ला० दीनदयाल बाहर चले गये।

तब आंनों को फिर एक बार पोंझ कर और तनिक स्वस्थ होकर, शान्ति मेख के पाम आई और कुर्मी पर बैठ, पैर अपनी ओर को निमका, कलम उठा कर उसने लिखा—

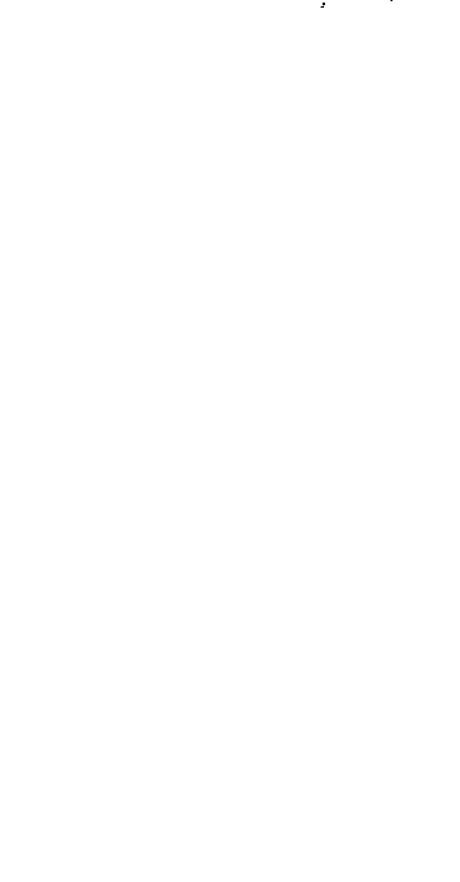
बहिन गोमती,

तुम्हारी बहिन अब पड़ी बन गई है। बड़े आदमी की बीबी है। बड़े आदमियों की सीवियां अब उसकी बदन हैं। पिजरे में बन्द पड़ी को क्या इजाजत होती है कि स्वच्छन्द, स्वतन्त्र बिछार करने वाले अपने हमजोशियों से मिले ? मैंने तुम्हें कल फिर आने के लिए कहा था, पर अब गुम कल न आना। अपनी इस बन्दिनी बहिन को भूलने की कोशिश करना।

शान्ति

इस बार उसने एक पॉल भी नहीं बाटा और न कागज ही काटा। हा, एक बार लिखते लिखते फिर आभ्र भर आन में आ बक-दो आमुआं को बर पत्र पर अनायास ही गिर पड़ी

एक प्रेस में नौकरी करता था, ७५) मासिक वेतन पाता था। घर में एक बूढ़ो मां को छोड़ कर और कोई न था। बिहार के रहने वाले थे। कुछ ही दिनों से यू० पी० में आये थे। परदा के बड़े पत्तपाती और पुरानी रूढ़ियों के कायल थे। नाम था विश्वमोहन। जब तिवारी जी ने विश्वमोहन और उनके घर को देखा तो उनकी सुरी का ठिकाना न रहा। विश्वमोहन बाबू पूरे साहब देख पड़ते थे। उनके घर में खिड़की और दरवाजों पर चिकें पड़ी हुई थी। खमीन पर एक बड़ी दरी पड़ी थी जिसके बीच में एक गोल मेज थी। मेज के आस-पास बड़े कुर्सियां पड़ी थी। जब विश्वमोहन ने तिवारी जी से चाय पीने का आग्रह किया और तिवारी जी को उनके आग्रह से चाय पीना ही पड़ा तो बहा का माज-सांमान देखकर तिवारी जी चकित हो गये। हर्ष से उनकी आँखें बमक उठी। सुंदर-सुंदर प्यालों में मेज पर चाय पीने का तिवारी जी के जीवन में पहला ही अवसर था। मेज पर चाय पीने के बाद तिवारी जी ने दो गिन्नी बरीष्ता में देकर शादी पक्की कर ली। रास्ते में नारायण बोला—कहो तिवारीजी, है न लड़का हजारों में एक ? है कोई तुम्हारे गांव में ऐसा ? जब कपड़े पहन कर हँट लगा कर निकलना है तब कोई नहीं कह सकता कि साहब नहीं है। सब लोग मुक कर सलाम करने हैं। घर में देखा ? कितना परदा है। सब खिड़की दरवाजों पर चिकें पड़ी हैं। इनकी मां बूढ़ी हो गई हैं। पर क्या मजाल कि कोई परदाई भी देख ले। दोनों समय चाय पीने हैं, कुर्सियों पर बैठते हैं।



पहुँचने पर जब वह एक कोठरी में बन्द कर दी गई और बाहर की साफ हवा उसे दुर्लभ हो गई तो उसे समुराल का जीवन बड़ा ही कष्टमय मालूम हुआ। अब उसे गहने कपड़े न सुहाते थे। रह-रहकर कोठरी के बाहर निकलकर साफ हवा में आने के लिए उसका जो तड़पने लगा। स्वच्छन्द हवा में विचरने-वाली बुलबुल की जो दशा पिंजरे में बन्द होने के बाद होती है वही दशा मोना की थी। चार ही छै दिन में उसके गुलाबी गाल पीले पड़ गये, आँखें भारी रहने लगी। एक दिन विश्वमोहन आकिस चले गये थे, साम सो रही थी, मोना आंगन के बाहर दरवाजे के पास चली आई। चिक को खरा हटाकर बाहर देखा। यहाँ देहात की सुन्दरता तो न थी फिर भी साफ हवा अवश्य थी। इतने दिनों के बाद क्षणभर के ही लिए क्यों न हो बाहर की हवा लगते ही सोना का चित्त प्रकृष्टित हो गया किन्तु उस समय एक बुढ़िया व्धर से निकली। सोना को उसने चिक के पास देख लिया। आकर विश्वमोहन की माँ से उसने कहा— वह को खरा सम्हालकर रखा करो। न साल, न छ महीने अभी से खड़ी होके बाहर आकती है। यह लच्छन कुलीन घर की बहु-बेटियों को शोभा नहीं देत। बिम्बु की अम्मा। तुम्हारी इतनी उमर हो गई आज तक किसी ने परछाई तक नहीं देखी और तुम्हारी ही बहु के ये लच्छन ! कलतुग इमा को कहने हैं।

बुढ़िया तो उपदेश देकर चली गई पर मोना को उस दिन बड़ी डाट पड़ी। उसकी समझ में न आता था कि चिक के पास जाकर उसने मौन ना अरगार कर डाला। फिर माँ के चांग ने



घर का सारा भार सोना को सौंपकर सोना की सास ने घर-गृहस्थी से छुट्टी ले ली। कभी घर का काम करने का अभ्यास न होने के कारण सोना को घर के काम करने में बड़ी दिक्कत होती, इसके लिए उसे रोज़ माम की झिड़कियाँ सहनी पड़ती। सोना ने तो खेलना खाना और तितली की तरह उड़ना ही सीखा था। गृहस्थी की गाड़ी में उसे भी कभी जुतना पड़ेगा, यह तो उसने कभी सोचा ही न था। किन्तु यह कठिनाता महीने-पन्द्रह दिन की ही थी। अभ्यास हो जाने पर फिर सोना को काम करने में कुछ कठिनाई न पड़ती।

घर में रात-दिन बन्द रहने की उसकी आदत न थी। बाहर जाने के लिए उसका जी सदा व्याकुल रहता। यदि कभी पिलौनेवालों की आवाज सुनती या “चना जोर गरम” की आवाज उसके कानों में पड़ती तब वह नङ्ग-सी जाती। अपना यह कैदखाने का जीवन उसे बड़ा कष्टप्रद मालूम पड़ता। किन्तु सोना बहुत दिनों तक अपने को न राक मकी। वह माम और पति की आज्ञा बचाकर गृह कार्य के पञ्चान कभी झिड़की, कभी दरवाजे के पास, जब जैसा मीठा मिलता, जाकर गड़ा हो जाती। बाहर का नश्वर, हरे-हरे पेड़ और पत्तियाँ देखकर उसे कुछ शान्ति मिलता। बाहर की ठंडी हवा का स्पर्श करके उसमें जैसा कुछ जीवन आ जाता। वह जानता थी कि झिड़की दरवाजे के पास, वह कभी किसी बुरे उद्देश्य से नहीं जाती फिर भी पति नाराज होगा, माम झिड़कियाँ लगावगा, इसलिए वह सदा बनकी नज़र बचाकर ही यह काम करना।

धीरे-धीरे इसकी चर्चा विश्वमोहन के कानों तक पहुँची। इन सब बातों को रोकने के लिए उन्होंने अपनी माँ की उपस्थिति आवश्यक समझी। इसलिए माँ को बुलवा भेजा। साथ ही मोना को भी समझा दिया कि वह बहुत मम्मलकर रहा करे। साम के आने पर मोना के ऊपर फिर से पहरा बैठ गया। किन्तु वह तो गांधी की लड़की थी, साफ हवा में बिचर चुकी थी। उसके लिए सख्त परदे में घिलकुल बन्द होकर रहना बड़ा कठिन था। इसलिए उसका जीवन बड़ा दुःखी था। उससे घर के भीतर बैठा ही न जाता था। ज़रा मौका पाते ही बाहर साफ हवा में जाने के लिए उसका जो मचल उठता और वह अपने आप को रोक न सकती। विश्वमोहन ने एकान्त में उसे कई बार समझाया कि मोना के इस आचरण से उनकी बहुत बदनामी हो रही है, इसलिए वह गिडकी दरवाजों के पास न जाया करे और बाहर न निकला करे। एक दो दिन तक तो उनकी माने खाद रहती। किन्तु वह फिर मूल जाती और बड़ी हाल फिर हो जाना। जब फिर गिडकी दरवाजों के पास जाती तब बाहर की साफ हवा में जाने के लिए, प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को देखने के लिए उसका आगे मचल उठती।

एक दिन विश्वमोहन को किसी काम से शहर के बाहर जाना था। मोना न पान का सामान ठीक कर उन्हें स्टेशन खाना दिया। साथ खाना खा चुकने के बाद लेट गई। मोना ने अपने गृहस्था के काम बन्धे समाप्त करके रुखी चाँटा की, कपड़े बदले, पान बना के खाया, फिर एक पुश्तक लेकर पढ़ने के लिए

घटन टाककर, तुर्गो कैजू को देकर यह अन्दर आई। सोना ने स्थान में भी न सोचा था कि यह ज़रा-सी बात यहाँ तक पहुँच आयगी। पति का चेहरा देखकर यह सहम-सी गई। उनकी लोभिया चट्टी हुई, चेहरा स्याह और आँखें बुझ गीली थीं। सोना अन्दर आई। विश्वमोहन ने उसकी तरफ आँख उठाकर भी न देखा। उमने धरते-धरते पति से पूछा—कैसे लौट आये ? विश्वमोहन ने मर्याई से दो शब्दों में उत्तर दिया—माफ़ी भेट है।

सोना ने फिर खिन्ना—अब क्या जाओगे ?

विश्वमोहन ने एक तीव्र दृष्टि पत्नी पर डाली और कठोर स्वर में बोले—माफ़ी तीन घण्टे बाद आयगी तब चला जाईगा। सोना फिर नश्वना में बोली—तो इस प्रकार बैठे क्या तक रहोगे ? मैं माफ़ी बिदाये देती हूँ आराम से छूट जाओ।

मुझे कुछ करने की कोई आवश्यकता नहीं, मैं बहुत अच्छा तरह हूँ, विश्वमोहन ने कड़ स्वर में मर्याई से कहा। मर्या ने बहुत आसह करने पर विश्वमोहन ने कमरे में घेर रखा, न वह कुछ बोलें और न माफ़ी ही पर भेट, कुर्मी पर बैठ गए। एक घन्टा उड़ाकर उमह पल्ले चलाटने लगे। पड़ने के नाम से चर्माचर्च एक अक्षर भी न बढ़ सकें ही किन्तु इस प्रकार व अचली अचर्माइना का गुणगान बहुत ही घूंट की तरह की रह गे। सोना का आचरण कई हज़ार-हज़ार विन्तुओं के वृत्त की तरह वीरु बहुतो रहा था। पति की अचर्माइत पैरना मर्या से दिया न था वह लरा विश्वमोहन ने उनके पास बैठे

आहत-अपमान से सोना तड़प उठी । वह कटे हुए वृष की भाँति स्वाट पर गिर पड़ी और खूब रोई । रोने के बाद उसकी जी बुझ हल्का हुआ । उसे अपने गाँव का म्यच्छन्द जीवन याद आने लगा । देहाती जीवन की सुन्दर स्मृतियाँ एक-एक करके सुरुषि की सुन्दर कल्पना की भाँति उसके दिमाग में आने लगी । उसे याद आया, किम प्रकार जाड़े के दिनों में अलाव के पास न जाने कितनी रात तक बुझे, जवान, सुवर्तियाँ और बच्चे सब एक साथ बैठकर आग तापते हुए पहेलियाँ बुझाते और हिस्से-बढ़ानियाँ बढ़ा करते थे । किमी के साथ किमी प्रकार का बन्धन न था । नदी पर गाँव भर की बहू-बेटियाँ कैसे स्नान करने की जाती थी और फिर सब एक साथ गानी हुई लौटती थी, कितना सुखमय जीवन था वह । चने के गंत में नम-नम चने की भाँजी तोड़कर सब एक साथ ही किम प्रकार खाया करते थे और कभी-कभी छोना-भूपटी भी हो जाता करता थी । हँसी-मजाक भी खूब होता था । किन्तु वहाँ किमी को कुछ शिक्षावत् नहीं थी । अपने पड़ोसी कुन्दन के लिए वह अपनी माँ से लड़भिड़ कर भाँ मिटाई ले जाता करता थी । नदी पर नहाने के बाद कभी-कभी कुन्दन उसकी धोती भी धो दिया करता था । किन्तु वहाँ तो कभी इसकी चर्चा भी नहीं हुई । कोशिये में एक सुन्दर माँ पाल का बटुआ बनाकर सबके सामने ही तो उसने कुन्दन को दिया था, जो अब तक उसके पास रखा जाता पर वहाँ तो इस पर 'कमा' की भी चुरा न लगता था । वहाँ सब लोग 'स' सबसे बोलने शान करने की व्यवस्था

विकल्प मोना के मस्तिष्क में आये और चले गए ।

तीन दिन के बाद विश्वमोहन लौटे । जाने के पहिले उनमें और मोना में जो कुछ बातचीत हुई थी, वे उसे प्रायः मूल-से गये थे । मोना के लिए अच्छी भी माफ़ी, एक जोड़ी पैरों के लिए सुन्दर-भी स्लीपर और कुछ डेयर-क्लिप भी लिये हुए वे घर आये, किन्तु सामने चबूतरे पर उन्हें केजू रैठा मिला । घाम की हरी-हरी घाम पर यह अपना तीतर चरा रहा था । विश्वमोहन उसे देखते ही तिलमिला-से उठे, मन्देह और भी गहरा हो गया । सारी बातें व्यो की व्यो ताजों हो गईं । उनका हृदय थड़ा ही विचलित और व्यथित हुआ, न जाने कितनी प्रकार की रांकारें उन्हें व्याकुल करने लगीं । उनका चेहरा फिर गंभीर हो गया । घर आकर वे मोना में एक बात भी न कर सके । मा से एक दो बातें कर, बिना भोजन किये ही वे आहिम चले गए । मोना से यह उपेक्षा न सहों गई । पिछले तीन दिनों में वह गिड़की दरवाजे के घाम भी न गई थी, और उसने यह निश्चय कर लिया था कि अब वह कभी भी गिड़की दरवाजों के घाम न जायगी । किन्तु विश्वमोहन की इस उपेक्षा ने उसका हृदय के घाव को और भी गहरा कर दिया । मोना अब इससे अधिक न सह सकती थी, अपनी जीवन-लीला समाप्त करने का उस कोई साधन न मिला तब आगंत में लगे हुए उनका पद उस कमरे का लान फलें तोड़ लिय और घासकर वा गट । फट्टा लगे घाव मोना के पैर अकड़न लगे उसका जीवन पट्टा गिर और चटका राला पड़ गया । वह देखती थी । किन्तु बाल न सकता था । इसी समय

विचित्र मयंवर

लगभग तेरह सौ वर्ष पहले की बात है। अंग देश में सत्यसेन नाम का राजा राज्य करता था। यह राजा आभ्र वंश का था। इसके पूर्व पुरुषों ने दक्षिण में आकर अंग देश में राज्य स्थापित किया था। सत्यसेन ने शम्पा नगरी में राजधानी स्थापित करके अपने राज्य को उत्तर में मिथिला तथा मत्स्य देश तक और दक्षिण में गंगा नदी के सुन्दर तट से कलिंग के मघन वन पर्यन्त बढ़ा लिया था।

यह समय प्रभावशाली बौद्ध धर्म और निर्वाणोन्मुख वैदिक धर्म के संघर्ष का था। इस संघर्ष का ही मंभयत यह प्रभाव था कि उस समय के राजाओं को सधरे तन्द्रा आती थी। प्रबल प्रतापी सत्यसेन रात को जागता था और दिन में सोता था। ठीक ही है, जिस समय साधारण जीव नींद लेते हैं, उस समय संयमी पुरुष जागते हैं। रौद्रमूर्ति राजा रात को तान्त्रिक बन जाता था और प्रभान में वैदिक पूजापाठ समाप्त करके नौ बजे के पहले ही आर्यें मंदने लगता था। कोई कोई कहते हैं कि उस समय देश में बौद्ध धर्म के अभ्युदय का वही प्रभाव था जो अफीम के लेश का होता है।

अब तक जो बात बतल चली, पर, शिलाालम्ब, नाभशामन, दानपत्र आदि पाषाणयुग के वस्तुओं से जाना जाता है कि

राज्य में आये-जाये ही नहीं। नहीं, जिसको आना जाना हो मुरी से आये और वहां रहे, परंतु कोई विवाह की चर्चा न करे। यम, अम-राज्य में मय से अधिक भयंकर बात उसके विवाह की चर्चा ही थी।

राजा सत्यसेन भी मंडा से डरता था। देश के दूसरे राजा और मारी प्रजा भी उससे भयभीत रहते थे। ऐसी दशा में उसके विवाह की चर्चा कौन उठावे ? मंडा कुमारी रह गई—उसका विवाह न हुआ।

मंडा की माता मर चुकी थी। माता की मृत्यु के बाद पिता के राज्य का मारा भार उसने उठा लिया था। इस तरह वह अपूर्व लड़की कम समय राजकार्य का भार, यौवन का भार, सुख-दुःख की स्मृति का भार, ज्ञान का भार और धर्म का भार लेकर अपने जीवन के पथ में अकेली चल रही थी।

राजमभा के विशाल भवन में आज बहुत से मंत्री, बड़े बड़े राजकर्मचारी और मित्रराज्यों के कई राजकुमार उवस्थित हैं। मंडा महाराज के निहामन के पीछे बैठी हुई है। एक ओर कर्ण-सुवर्ण के राजपुत्र कुमार नायकमिह ऊंचा गर्दन किये हुए उस अद्भुत और अपूर्व बालिका के रूप को देख रहे हैं। नायकमिह सुन्दर, सुमंजस और मुखार है। वे मंडा के पालि-मदल की इच्छा से बम्हा नगरी में आए हैं।

एक मन्त्राज्ञ के बाद अमावस्या है। इसदिन बालीपूजन और 'नमोऽस्तु ते नमोऽस्तु ते' का विचार हो रहा है। मय की हाथ में यह है कि यह १६ न १६ ११११ अम, १११ म ११११

कन्याएँ हो ।

शब्द के होते ही उस विशाल भवन के द्वारों तन्नापूर्ण नेत्र उसके ऊपर जा पड़े ।

निद्रा में एकाएक बाधा पड़ जाने से राजा मरत्यमेन को बड़ा क्रोध आया । वे बोले—यह आदमी चोर है ।

भिक्षु ने दोनों हाथ उठाकर कहा—आपका कन्याएँ हो ।
तब मन्दा ने पिता के कान में कुछ कहकर, सर्पिणी के समान क्रुद्ध होकर पूछा—तुम किस राज्य के प्रजाजन हो ?

भिक्षु—विश्व-राज्य के ।

मन्दा—मानूँ होता है तुम कोई म्यागधारी डाकू हो ।

भिक्षु—कन्याएँ हो ।

मन्दा—कन्याएँ कौन करेगा ?

भिक्षु—जीव अपना कन्याएँ आप ही करता है ।

मन्दा—मैं तुम्हारा परामर्श रूप श्रृणु नहीं लेना चाहती ।

भिक्षु—मैं श्रृणु नहीं देता, दान करता हूँ । मैं देखता हूँ कि इस विशाल राज्य में शक्ति-पूजा की तैयारी हो रही है; जो बहुत ही घृणिन और हस्याकारी कर्म है । यह सृष्टि की बाल्यावस्था की अज्ञानजन्य क्रिया क अतिरिक्त और कुछ नहीं है । आप ज्ञान लाभ करके इसे छोड़ दें ।

प्रधान मंत्री बोला—यह कोई बौद्ध भिक्षु है । मनापति रुद्रनारायण ने कहा—इसको बाहर गला पर चढ़ा देना चाहिए ।

मन्दा बीच में जल पड़ा । उसने रुद्रनारायण से कहा—

है, और वह किसी को आत्म-त्याग करना नहीं सिलता, तब तुम निश्चय ममम्हो कि एक राजा मिटकर हजारों राजा हो जाएंगे और देश में राष्ट्रविप्लव हो जाएगा। जब धर्म की जलती हुई आग राजसिंहासन से भ्रष्ट होकर अन्य आधार ग्रहण करती है और उस महान् विप्लव के समय क्रूरता, स्नेह, पवित्रता, साम्य, शांति और प्रीति आदि सद्वर्ण नहीं होते, तब उसमें सब ही भस्म हो जाते हैं। इस बड़े भारी राज्य में पाप का प्रवेश हो गया है। यहाँ मर्यादा का शब्द और मर्त्यत्व धर्म का मर्यादाश किया जाता है। यहाँ निःमहाय और मूक प्राणियों को बलि चढ़ाकर पाप को उकमाया जाता है। कुमारी मद्रा, कालीपूजा की फिर से प्रतिष्ठा करके ये सब लोग बिना समझे यूँके घोर तामसी वृत्ति को अपनी ओर खींचने का उद्योग कर रहे हैं। तुम्हें चाहिए कि इस जीव-बलि की जगह आत्मबलि की शिक्षा देकर पूजा प्रतिष्ठा करो। यह आत्मबलि ही सही कालीपूजा है। यह बौद्ध भिक्षु भी तुम्हारी इस पूजा का प्रसाद लेकर आत्ममुक्ति करेगा।

उक्त व्याख्यान सुनते सुनते बहुत-से लोग फिर ऊपने लगे। राजा साहब का उनमें पहला नम्बर था। मद्रा ने कहा—यह आदमी पागल है, इसको देवदत्त पुजारी के घर में कैद करके रक्खो।

३

बृद्धा देवदत्त पुजारी घोर शाक्त था। उसका एक बामनदास नाम का पुत्र था, जिसका उमर लगभग १२ वर्ष का था। वह एक

सेनापति—यदि भाग गया तो इसके साथ आपका यह जटाधारी मस्तक भी चला जायगा । इसलिए इसे किसी तरह अपने तन्त्र-मन्त्र-बल से बांधकर रक्खिएगा ।

सेनापति चला गया । देवदत्त ने भिन्न की ओर देखा । उस देवतुल्य सुंदर युवा की मूर्ति देखकर उसे विश्वास हो गया कि भिन्न भाग जाने वाला व्यक्ति नहीं है । इसके बाद उसने कुछ सोचकर पुकारा—सती !

सत्यवती करीबे में से देख रही थी । शीघ्र ही बाहर होकर नीचा सिर किये हुए बोली—कहिए, क्या आशा है ?

देवदत्त—यह बौद्ध भिन्न राजकुमारी की आशा से सात दिन के लिए अपने यहां कैद रक्खा गया है । इसकी देख-रेख का भार मुझें सौंपा जाता है ।

सत्यवती ने हँसकर कहा—अच्छा, किंतु यदि यह भाग गया तो ?

देवदत्त—यह वामनदास के बराबर न दौड़ सकेगा । उसको जरा मेरे पास बुला लाओ ।

पिता की आशा से वामनदास ने रात को पहरा देना स्वीकार किया । दिन की देख-रेख का भार सत्यवती पर रहा ।

भाई-बहन को भिन्न की देख-रेख का भार सौंपकर देवदत्त मंत्र जपने के लिए फिर घर में चला गया और वामनदास अपने वेद-पाठ में लग गया । सत्यवती माहस करके भिन्न के सामने खड़ी हो गई और बोली—तुम्हें मैं क्या कहकर पुकारा करूँ ?

भिन्न—कुमारी । मैं तुम्हारी हथेली देखना चाहता हूँ ।

मकली । बस, फिर क्या था, मुँड-के-मुँड स्त्री-पुरुष देवदत्त के घर आने-जाने लगे । इसके मिथा लाला सादृश कभी-कभी मौला पावर मुंदरी कुमारियों को संन्यासिनियों के वेश में और रूपवती वेश्याओं को गृहस्थों की कन्याओं के वेश में भी वहाँ भेजने लगे, जिससे कि किसी तरह भिक्षु पथ-भ्रष्ट हो जाय किंतु वे सब ही बड़ा से विफलमनोरथ लौटने लगीं । उम बौद्ध भिक्षु के अजेय इन्द्र-दुर्ग का एक अणु भी विचलित न हुआ । लाला जी की भूटी गण सच हो गई । उमका असीम करुणामय मुख देखकर और उसकी स्नेहमयी वाणी सुनकर मे रडों स्त्री-पुरुष बौद्धधर्म ग्रहण करने लगे ।

यह खान धीरे-धीरे राजकुमारी के कानों तक जा पहुँची।
कृष्ण त्रयोदशी की मंथ्या को अपने सेनापति को आज्ञा दी
कि किरानप्रसाद को इसा समय मेरे सामन लाया जाय।

लक्ष्मणलक्ष्मी हा विष्णुनयनास उपस्थित किया गया। सेनापति को
बड़ी ही खले ज्ञान का डगारा करके राजकुमारी मन्दा ने तारतम्य
कहा—विष्णुनयनास मय्य मय्य इति लक्ष्मणा कया अभिप्राय
हे ? विष्णुनयनास ने हाथ जोड़कर कहा—राजकुमारी इस व
काले आर मय्य क भाना है यो मे क प्रक न ज्ञान हूँ इति वय
मे आशय कूट इति लक्ष्मी ने कहा—राजकुमारी इस वकाले
मया क—मे मया कूट इति वय क इति लक्ष्मी ने कहा—राजकुमारी
इति वय क इति लक्ष्मी ने कहा—राजकुमारी इति वय क इति लक्ष्मी
ने कहा—राजकुमारी इति वय क इति लक्ष्मी ने कहा—राजकुमारी

[illegible]

मैं नदी और पर्वतों को भी सहज ही पार कर जाऊँगी।

सारा नगर घोर निद्रा में मग्न था। चारों ओर मन्नाटा छा रहा था। रास्तों पर एक भी मनुष्य नही दिखाई देता था। भिक्षु मरयवती के माथ देवदत्त के घर से चल दिया।

६

रात दस चुकी थी। राजकुमारी मंदा चंपागढ़ के मिहिर को पार करके टहर गई। यह एक शोधगामी घोड़े पर सवार थी और हाथ में धनुर्बाण लिये थी। उसने कुमार नायकमिह को पुकारकर कहा—कुमार, आप अंगराज्य के पुराने मित्र हैं। इस समय आपको मेरी एक बात माननी होगी।

कुमार नायकमिह ने प्रमत्ततापूर्वक कहा—मैं आपकी आज्ञा पालन करने के लिए तैयार हूँ।

मंदा—राजधानी से बाहर जाने के फैसले दो ही रास्ते हैं। अभी बौड़ी ही दूर पड़ने बौद्ध भिक्षु कुमारी मरयवती को लेकर भागा है। यह तो नदी मानस कि वह किम रास्ते गया है, परन्तु गवाड़े इन्हीं दो रास्तों में से किसी एक में। अभी धर्षा-भर पहले ही दिगन्तप्रसाद ने मुझे इस बात की सूचना दी है। अतएव राजा के अनुसार उन दोनों का गोकना हमारा कर्तव्य है। एक रास्ते से तो मैं दिगन्तप्रसाद स्वयं ही और रुद्रनाथराज सेनार्जुन को पार हाँसिया सेतिका के साथ भेज दिया है। अब एक रास्ता और है। आप ही कुशल के लिए भी बहुत प्रयत्न मुना है। इसलिए मैं बाइली के इस रास्ते से आप ही रास्ते और भिक्षु तथा मरयवती को भेज रहा हूँ।

भूमिसय ही कुछ देखने का अवसर मिला है । इसलिए कहता हूँ कि इस अंधेरी रात में यह कंटकमय और पथरीला रास्ता तुम जैसी अगिलाओं के लिए घर का आंगन नहीं है । तुम भागने का प्रयत्न मत करो ।

कुमार नायकसिंह को अंगदेश में प्रायः सब ही जानते थे । मत्स्यवती भी उन्हें पहचान गई, इसलिए खड़ी हो गई और आँखों में आँसू भर हाथ जोड़कर बोली—कुमार, मैं अनाथ हूँ । मुझे तुम मर्ते ही कैद कर लो, परंतु भिक्षु 'शरण भैया' को छोड़ दो ।

कुमार—उन्हें छोड़ देने का अधिकार तो मंत्री को है । हाँ, मैं तुम्हें अवश्य छोड़ सकता हूँ । छोड़ देने में कुछ दोष भी नहीं है क्योंकि तुम भागना नहीं जानती ।

पीछे से किमी ने कहा—नहीं, कभी न छोड़ना । यह रमणी मेरी प्रणयिनी है ।

लाला किसानप्रसाद ने युद्धस्थल में अपनी बहादुरी की सीमा दिखलाने के लिए थोड़ी-सी शराब पी ली थी । आप कुछ पाम जाकर बोले—मत्स्यवती, तुम्हारा काम तुम्हारे सामने खड़ा है ।

मत्स्यवती ने कानर स्वर से कहा—कुमार, मुझे बचाओ ।

तुम्हें बचाने की शक्ति किमी में नहीं है । कहकर लाला साहब ने मत्स्यवती का हाथ पकड़ लिया ।

कुमार नायकसिंह ने सोचा—इस समय इस विज्ञाप की लाल-धूमों में पूजा करना ही विशेष कल्याण होगा, और बिना कुछ कहे-सुने उठने वैसा ही किया ।

झाकू उठा ले गया था। इतने समय के बाद अब उसका पता लगा है। तुम सावधान रहना; मिथिला की राजकुमारी को मैं तुम्हारे ही पाम छोड़े जाता हूँ।

भिखु चला गया। सत्यवती दौड़कर पास आ गई और
बुढ़ने लगी—कुमार, क्या अभी तुम्हारे पास मेरे 'शरणभेदा'
थे ? हाय ! वे कहाँ चले गए ?

नायकसिंह ने कहा—कुमारी मन्थवती, जिन बुद्ध भगवान ने मुझारे भाई को आश्रय दिया है, मैं भी अब उसी की शरण में ली है। मुझे अब कोई डर नहीं है। तुम इस समय शिवाईदर में बैठ जाओ। मैं जरा यहाँ-यहाँ घूमकर दूंगूँ, क्या हाल है।

मूमन्ताभार पानी बरस रहा था। अंधकार इतना गहरा था कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था। कुमार नायकमिह ने चित्रप्री के प्रकाश में देखा कि मंडा पगली के समान खड़ी आ रही है। उसके नेत्र उस गहन अंधकार को भेदकर भिक्षु का अनुसरण कर रहे हैं। नायकमिह को दम्बक रमन वृद्धा—कुमार, भिक्षु कहा गया ?

नामवमिह न वीर न पुडा—कथा ?

[illegible][illegible]

अंगराज्य में शत-सहस्र धाराओं के रूप में बहे और सब के लिए शान्तिप्रद हो ।

मंद्रा ने हाथ जोड़कर कहा—जीवननाथ, आप संसार को छोड़कर न जायें । याद कीजिये, आप प्रतिशपथ हो चुके हैं ।

भिछु—कौनसी प्रतिज्ञा ? मुझे तो याद नहीं आती ।

मंद्रा—देव, उस दिन आपने स्वीकार किया था कि मैं आत्मबलि देकर अंगराज्य में करुणा का संचार करूँगा । अब आप उसी सत्यपाश में बंधे रहो । भिछु महाशय, संसार में ही रहो, इसे मत छोड़ो । आपको देव्य कर मैं सीखूँगी और आपको अपने हृदय-मंदिर में विराजमान कर मैं आपकी पूजा करूँगी । मुझे अब अपने धर्म की दीक्षा दो । भिछुराज, प्रतीत होता है कि बौद्ध-धर्म बहुत ही अच्छा धर्म है ।

भिछु—कुमारी, क्या तुम मुझे संसारगृह में रखने के लिए तैयार हो ?

मंद्रा—सब तरह से । भिछु महोदय, अब मेरे हृदय के टुकड़े करके मत जाओ । मैं अपने प्राणों को तुम पर निहावर कर चुकी हूँ ।

उस भुवनमोहन मुख से विषादमयी वाणी को सुनकर भिछु उठ खड़ा हुआ । अपने पैरों में पड़ी हुई उस राजकुमारी को वह अपनी शक्तिशालिनी भुजाओं से उठाकर कुटीर के बाहर ले आया ।

पूर्वावाश में उषा की किरणों उन दोनों के मुख पर पड़कर एक अपूर्व-चित्र की रचना करने लगी ।

बाबू अन्नपूर्णानन्द जी

हिन्दी-कहानी-साहित्य में हास्यरस का प्रायः अभाव-मा ही है। बहुत कम लेखक ऐसे हैं जो शिष्ट और मुरुषिपूर्ण हास्य-रस की अभिव्यक्ति करने में वितास्त सकल हुए हैं। बाबू अन्नपूर्णानन्द जी हिन्दी कविपद्य कलाकारों में से हैं जो कथा-साहित्य के इस अभाव की पूर्ति के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। भारत का अन्ध-स्थानकारी है। वहीं आपने शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की और वहीं साहित्य-सेवा का कार्य कर रहे हैं। हिन्दी-क्षेत्र में प्रवेश किये आपको कोई बहुत समय नहीं हुआ, परन्तु अपने प्रशस्त साहित्यिक प्रयासों के आधार पर अपने लिए आपने अच्छा स्थान बना लिया है। आपका हास्य परिष्कृत और मुरुषिपूर्ण होता है। उसमें मान्यता और अक्षोजता का सुन्दर अभाव रहता है।

आपकी कहानियों में साहित्य, राजनीति, विद्यार्थी-जीवन, शिक्षा तथा समाज की दुरवस्था आदि विषयों पर विशेष तौर पर बर्णन रहता है। उसमें विनोद की सामग्री प्रचुर रहती है।

‘मेरी हजामत’, ‘मगनरतु खोजा’, ‘महाकवि चचा’, ‘मगन-मोद’, आदि आपकी रचनाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं।

अस्तरत थी कावड़े की पर मैंने हाथ ही से अपने शरीर को धूल हटाई ।

मैं विलकुल मस्त हो गया । घूँस की बैतरणी पार करने के बाद यह बात स्वर्ग-मा प्रतीत हो रहा था । हृदय धीरे-धीरे आनंद की पेंग मारने लगा । बारह बज गये थे, मित्रों ने समीप तैयार कर ली होगी, मेरा इंतजार कर रहे होंगे । पता नहीं बाटियों को लोगो ने धी में तर कर रक्खा है या नहीं । मैंने कह तो दिया था ।

बारा में मैं दाखिल हुआ । पीछ में एक बारहदरी थी । बहान-चौकड़ी यही ठहरी होगी । मैं उसी तरफ बढ़ा । मन में सोचना जा रहा था कि एक बार पहुँचते ही सब को सूझ लगाईंगा कि दावत देने की आखिर यह कौन-सी जगह थी । रहूर में इतनी दूर और ऐसी खराब मक़द ।

लेकिन बारहदरी में कोई दिशाई न पड़ा । किमी पेड़ के नीचे सब होंगे । पिक-निक का मसाला पेड़ों ही के नीचे आता है ।

मैंने मारा बाग़ छान छाना, वही किमी की गंध भी न थी । आखिर मामला क्या है ? दूर पर एक माली कुछ काम करता दिशाई पड़ा । उसके पास जाकर मैंने पूछा—क्यों भाई ! आज सुबह राहूर से कुछ लोग यहाँ मेरे क़त्ल आये थ ?

नाही नो—उमन कहा ।

थर मुग़ल नाम का कोई आदमी नहीं आया वा ? नक़्हरा बनन माइक़ी है । 'त ११ १६ बदा' का मसाला

कर दिया और ईश्वर भूठ न कहलाये, पंद्रह मिनट तक लगातार सब हँसते रहे ! मैं मूढ़ा दांत पीमना रहा ।

मुरारी ने हँसते हुए कहा—देखो, जब तक तुम हम लोगों को एक दावत न दे लोगे तब तक हम लोग तुम्हें इसी तरह बेवकूफ बनाकर छकाया करेंगे ।

किमी तरह अपना गुस्सा पीते हुए मैंने कहा—अपने घर पर तो मैं तुम लोगों को दावत दे नहीं सकता । मेरी स्त्री तुम लोगों को समाज की तलछट समझती है ।

अच्छा ! बाहर कहो ।

राहुलगंज चलोगे ? छोटी लाइन से तीसरा स्टेशन है यहाँ से । बड़ा रमणीय स्थान है । यहाँ के स्टेशन-मास्टर मेरे मित्र हैं । दावत का मारा प्रयत्न कर रखेंगे ।

मेरी यह राय सबको पसन्द आई । कल ही वहाँ चलने की पक्की ठहरी । दूसरे दिन शाम को पाँच बजे की गाड़ी से हम लोग रवाना हुए और छः बजते-बजते राहुलगंज पहुँच गये ।

पं० नेकीराम मेरे साथ इतने आदमियों को देखकर धर्राये । उन्हें अलग ले जाकर मैंने उनसे कुछ बातें की । वे हँस कर चुप हो रहे । मैंने पूछा—आप कल सुबह जा रहे हैं ?

कल सुबह नहीं बल्कि आज ही रात में तीन बजे की गाड़ी से । मेरे रिलीफ * आ गये हैं । कल से मेरी छुट्टी शुरू होगी ।

इधर मुरारी और मोहन में यह बहस हो रही थी कि आमन

* स्थानापन्न कार्यकर्ता ।

से पूछता है—तो फिर मित्री और छोटी कैसे जाएंगी ? वे कहती हैं—हम वहां खिलौने लेंगी—कपड़े लेंगी—कह कर वह बुढ़िया की ओर बड़ी उत्सुकता से देखता है। वह चुप रहती है। उससे लड़के का कौतूहल बढ़ता है। यह फिर पूछता है—तो क्यों दादी, सचमुच वहां खिलौने मिलते हैं।

मिलते होंगे बेटा !—उसकी उत्सुकता से वह निराशा हो रही है। उसके मन में एक अस्पष्ट चित्र उदय हो रहा है। वह स्तब्ध कर बोलती है—वहां बड़ी भीड़ होती है, जाड़े की इस रात में वहां सब नहाते हैं, बस और सुख नहीं होता। वह अपना विरोध प्रकट करने के लिए एक दीर्घ श्वास छोड़ कर चुप हो जाती है।

लड़के का आश्चर्य और बढ़ जाता है। वह और आनुरता से पूछता है—बड़ी भीड़ होती है ?

और क्या !—वह शोभ से भर कर कहती है—ऐसी भीड़ होती है, कि कितने दब जाते हैं ! एक दूसरे पर गिर कर मर जाते हैं ! और बेटा, एक दूसरे से छूट कर उस भीड़ में भूल जाते हैं !—बुढ़िया की आंखों में आंसू भर आते हैं, वह भरे हुए फंठ से कहती है—फिर भला हम वहां कहां जाएंगे ? मेरे बच्चे, तू मेरी गोद से छूट जायगा। तुम्हें कैसे संभालूंगी ?—वह उसे गोद में उठा लेती है, घूमती है। उसकी आंखों में आंसू की दो थेंदें बालक के मिर पर गिर जाती हैं। वह उसे अपने आलिंगन में घिपटा लेती है।

बालक के घिपकने से उसके प्रेम में उत्कान आ रहा है। वह

में—गुण्यकार्य में.....! अपनी इच्छा को समझ कर वह इसी से अपने को बचाती रही है। पर, अब वह वैसा नहीं कर सकती। वह उद्भिन्न है। सबसे विनय कर रही है। वह सुदिया को कारी भट्टलाने का गुण्य-स्त्रोत्र !—हाथ जोड़ कर—वह गाँव भर को बताने आई है। जेन्हीं लोको के विश्वास पर वह जा रही है। अब मरने के पहले उसकी जैसे यही साथ है। सब के साथ वह भी उम्माह दिव्या रही है। उसके भी मन में उम्माह है।

सब के साथ वह भी मैदार हो गई है। उसने अपनी पोटली फिर पर रख ली है और बन्धों की अंगुलियाँ उसके हाथ में हैं। अपने सब सारियों के पीछे उसने अपना सारा पाया है। उसकी निरीक्षा में जैसे उसका यही स्थान है। उस लहर के ने जैसे और सब उसका सो दिया है। वह अब जैसे एक धुन में है। वह अपने ही मन में लीन, मौन और निर्विकार बन गई है। साथ की शिवा गीत का स्वर निकल रही है, पर लहर का मानना नहीं है। वह रह-रह कर उसे स्वीकृत है, यत्न है। वह एक से दूसरे लहर के वाम पट्टन जाना चाहता है। सब देखा—वह भी सब रहा है। उसकी दाढ़ी नहीं पट्टन रही है। अब दाढ़ी वह लहर का पुकारता है जेब में बान करना है—दाढ़ी। छोटी। जो सब बसने बग है मानना सबका रहता है दाढ़ी पट्टन है। सब का जीवन था। दाढ़ी कितन हा दिमाक था है। दाढ़ी का जीवन था। दाढ़ी का जीवन था—सब जेब लहर का दाढ़ी का जीवन था। दाढ़ी का जीवन था।

उसी समय राहुर चलने की तैयारी हो गई है। लाल, पीली और काफ़ी बूटियों की धारें ओढ़े उन औरतों का गरोह, जैसे गंग-विरंगी तितलियों के झुण्ड है। उनके पीछे बुढ़िया भी किमी मूखे घुस के ठूँठ की तरह लगो है, जिसे छोड़ कर वे उड़ी जा रही हैं। उनकी आंखें विस्मय से विमुग्ध हैं, नगर उनके लिए अलौकिक सत्ता है जिसको उनकी कल्पना इन्द्रलोक बना देती है। बच्चे और भी प्रसन्न हैं। घोड़ा, गाड़ी, मोटर और माइकिलें—इनकी पों-पों और दुन-दुन कितने तज्जप हैं। यह उछल रहे हैं ! मोटर से कीचड़ उछल कर पड़ने पर भी मच ईस रहे हैं ! केसा अच्छा यह उनका आश्रय और भाग्य है !

बाजार में पहुँचकर खरीदारी शुरू हो गई है। वह कुछ इधर, कुछ उधर दुकानों पर हो रही है। राहुर की पीछे, अड़न पीछे ले रही हैं। बच्चे अलग अपने मन की पीछे देख कर शोर कर रहे हैं। तब तक एक बच्चा चिल्लाता है—देख-देख कर मेरी टोपी !—उसकी सुनहले तारों में चमकमक चमकती हुई टोपी है।

बुढ़िया की गोद में लड़का अग्रनिभ हो गया है। उसकी आंखों में आंगू भर आये हैं। वह दादी की गोद में सुख दृष्टि से देखता है, मय से कुछ कहता नहीं चाहता है। दादी के मुख की पीड़ा को वह त्रैमे समझता है। इतना-जब वह अपनी आद को दबाकर दूसरी आद दगल जाना है। एक ओर देख कर कहता है—अहा आ दादा वह देख ! केसा अच्छी लाल-दही टोपी

दादी देखती है। एक आदमी लाल-हरी कानड की
 धी छतरी-सी लिये गया है। वह रह-रह कर योल ग
 ले लो, ये लाल-हरी टोपियां, तीन-तीन पैसे में। दुर्दि
 तुन जैसे बत्ताह में आ गई है। वह उसे ले रही है। द
 हो रहा है। दादी ने अपनी छोटी-सी गांठ गाली कर
 उसे टोपी पहना कर वह जैसे उसमें अधिक पा गई है
 अधिक लाभ में जैसे प्रसन्न है। वह चुप है। आनन्द-
 है। वह केवल प्रसन्न दृष्टि में उसे देख रही है, बच्चा जैसे
 है। वह जैसे आज उनका नहीं है। यह दूर से—एत
 प्यार करने पर, आज उसका बनकर आया है। ऐसा
 वह अविचल मुद्रा न सोनेगी। केवल अभी दृष्टि भर के
 ले। वह उसे प्रसन्न कर रही है। यह गर्व-भरित है।

यह ऐसा मय का गला है। अभिमान में भरा है
 वह किसी की ओर नहीं देख रहा है। वह अपनी कान
 टोपी लगाता है, उतारता है, देखता है, दादी से बिस्वा
 हैमता है। वह अपने में प्रसन्न हो रहा है। यह लाल
 टोपी उसकी अपनी की सीन कर रही है। रोशनी के प्र
 उसके बरह का रंगन कर रही है। वह देखता नहीं है,
 मुद्रा का भाव नहीं कर रही है। यह ऐसा ही प्रसन्न है,
 यह अपने में ही खोया है। हैमता है और दाय बरहा है
 का म दूरे से देख रहा है।

सो भी नहीं सकती। वह शिथिल होकर और भी अवसाद में बड़ी जा रही है। दया नहीं चल रही है, फिर भी पीपल के पत्ते पत्ते हिल रहे हैं—चमक रहे हैं। उनका शीतल स्पर्श उसके मन को कंपा जाता है।

बच्चे की देह जलते तवे-सी लाल है। सम्पूर्ण शरीर में मृत के रवे जैसे पड़े हैं। वह अपने उत्साह की दौड़ में शिथिल हो गया है। वह वहां से बढ़ भी नहीं पाता है। दादी उसे जकड़े हुए पड़ी है। इसी से जैसे शोभ में अवसन्न है। उसके हृदय पर वह बन्धन जैसे पहाड़ बन कर भार दे रहा है। वह ऊब रहा है। एक कापती आवाज निकलती है—दादी !

हा—वह आद भर कर कहती है—क्या है लाल !—वह अपने गीले कपड़ों के घेरे के भीतर झांक कर बड़े कातर स्नेह से उसे देखने लगती है।

बच्चे को जैसे सहारा मिल जाता है। वह अपनी मन की गांठ म्थोल कर धीरे से कहता है—मेरी अच्छी टोपी, दादी !—उमने अपनी टोपी सिर पर दबा ली है।

बुढ़िया के मुंह से 'हां' भी नहीं निकल पाता है। उसका हृदय जैसे चिर गया है। बालक के काले हो रहे होठों पर बिगरी हुई उसके कलेजे में और भी तीर बन कर धंस गई है। वह अपनी पीड़ा में एक क्षण उसे देखती है, फिर उत्तर में केवल मिर हिला देती है, और मां जकड़ कर उसे अपनी गोद में लिपा लेती है।

मुड़िया अपने लान्त शरीर में धँसुप पड़ी है। उनकी पीड़ा में एक ही कल्पना सिसक रही है—मेरी अच्छी टोपी...
...! अभी दो क्षण पहले की देखी, सिकुड़ी धुले हुए रंग की पिचकी-पिचकी टोपी, पहले-सी नई बन कर उसके भावों में रंग भर रही है। सचमुच वह उसी नरी में पड़ी है। उसके हाड़ों की ठठरी को पवन हिला देता है। वह जाग जाती है। फिर भी धुँचे की प्रसन्नता की निधि, वह लाल-हरी टोपी, उसे ढंक लेती है।

धुँचे का प्यार लुट गया है, इसी से वह लुट गई है। वह पीड़ा में डूब गया है, इसी से वह डूब गई है! वह बेहाल है, अशक्त है, असहाय है, मौन है, जल रहा है—कांप रहा है; इसी से उसकी दादी बेहोश है, निरीह है, निरबलन्ध है, चुप है, भर रही है—हिल रही है। वह अपने में नहीं है—खो गई है। रात भीगे पैरों भागी जा रही है।

पत्ते खड़खड़ा रहे हैं। उस, प्रशान्त नीरवता के हृदय की घड़कन जैसे बड़ रही है। एक 'ठक' की आवाज होती है। कोई सामने आकर जैसे खड़ा हो जाता है। ओह..... वह लम्बे लबाड़े में कालो मट्टेदार पगड़ी से लैस हाथ की लम्बी मोटी लकड़ी पर अफड़ दिये एक निपाही खड़ा है। उसे इस मुनसान रात में भागना हुई नई की जलधारा को देख कर जैसे 'ठक' भर गया है वह निश्चिन्त और सुखी है। उसने मुड़िया की ओर देखा था नहीं, पर वह एक बार फिर कांप गई है।

दान

चन्द्रशाल, रामचन्द्र, ज्योतिषमान् और दुर्धमराज का
आश्रमियों के साम है।

चन्द्रशाल एक चढ़ी की दुकान में भीम दण्डे का नौकर है।
भी है, यह बची है। सुन्दर-बमर मुश्किल में होती है। कोठ
बमरों में चढ़ना है, जूना टुकड़े टुकड़े हो जाता है, टोपी का
अर्ध बसान के लिए मंगे-मिर नौकरी पर जाता है। रामचन्द्र,
मायागण गृहणी हैं। जानि के रोय हैं। कृष्ण के सम्भे भक्त हैं।
श्रीना का नियमित पाठ करने और मार्ग पर चम्पन योन कर
पर में बाहर निवसने हैं। अनाज की मंडी में बुलासी करने हैं।
कृष्ण की कृपा में जानी आव हो जानी है। घर के लोग प्रसन्न
वा सुनी हैं। ज्योतिषमान् किसी अपने मरवासी बुनार में हंस
कर है। बेंचन तीन गी गपवा है। कपड़े रेखाती पहनने हैं। टोपी
कट लहाने हैं। 'अचदुता' का गिमोट पीने हैं। प्राय इतर में
कोर कर्म-कर्मों में छिड़ जाय में मकर करने और बीमों दणवा
अपन और बचों के स्वास्त्व की ओर में बाकटर पैरों को अरेण
करन है। दुर्धमराज, मंडी नीच मान, सुत्रि के अगधरा मरी
है। कपडार बमरी बगान है। मकलन-रोन का बोट वा मरत
का अगधरा पहनन है। बमरी दणवा का रंगिलगी में बड़े बड़े
का मरवा कर मरन है। कपडार वायव्यमा पहनन है, १२मी

यह आवाज विलीन हुई थी कि रामचन्द्र आ पहुँचे । मार्ग पर अब तक चन्दन पुता हुआ था । मंड में कृष्ण का नाम निकल रहा था, और मन अनाज की मँड़ी में भूम रहा था ।

रमजू का भाव मट बहल गया । आँठ फैल गए, निकल आए, शरीर कांपने लगा, और स्वर में वही कातरता बूट निकली । हाथ फैलाकर चीख पड़ा—बाधा, एक बैसा !...तेरे बचो की सैर

रामचन्द्र को कृष्ण-नाम और अनाज की मँड़ी के चितन में कोई व्यापान न हुआ, और वह बिना उधर देगे आगे बढ़ गया ।

रमजू ने मन्त्राण नेत्रों से देखा और धीरे से कहा—दाना तेरा भला करेगा ।

यह वाक्य अभ्यास-पत्र मंड में निकल गया था, या मन्त्र-मुक्त बगकी पेगी इच्छा थी, इसे हम नहीं जानते ।

रामचन्द्र थोड़ी दूर आगे बढ़ा था कि किमी ने रोक दिया । नजर उठाकर देखा, तो एक जटाधारी मन्त्रायामी । रामचन्द्र ने अवाक होकर खड़े साक्षा, और फिर दोनों ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया ।

मन्त्रायामी कहेंश्वर में बोला—बोल, मानु की इच्छा पूरी करेगा ?

रामचन्द्र सहमकर बोला—कठिन क्या है महाराज ?

मन्त्रायामी ने इतर कर देखा । सबक पर काट न था । फिर बोले—हो कृष्ण स्वर से बोल ।—तब मन्त्र में कृष्ण का नाम है । मन्त्रायामी की इच्छा न थी कि वह मन्त्र में कृष्ण का नाम है ।

रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर बोला—कृष्ण का नाम है ।



वस्तु को समझ करके, ज्योतिप्रसाद बोले—स्कीम तो अच्छी है!

जितनी देर में हैड-विल समझ हुआ, सबकी नजर उनके चेहरे पर जमी रही। अब यह बात सुनकर जैसे सब-के-सब पानी का छोटा ग्लास जाग उठे, और हर्षित होकर एक साथ बोले—अजी, यह तो आशा ही थी आपसे ।

ज्योतिप्रसाद ने कोशिश करके मुंह की मलिनता छिपाई और कहा—आप लोगों का साहस प्रशंसनीय है।

बिहारीलाल बोले—अजी देखिए, आज लाखों की संख्या में अनाथ बच्चों विधर्मी हो रहे हैं । (ज्योतिप्रसाद ने अनिश्चयता पर ध्यान न दिया, और मुंह की मलिनता छिपाने के लिए फिर हिलाकर समर्थन किया।) ईसाई और मुसलमान इन बच्चों की ब्योज में मद-बाये फिरने हैं, और अन्त में उन्हीं की मदद से हमारे परिवर्धन पर कुटाराघात करने हैं। अगर हमारे पूर्वज इस बात का ख्याल रखने, तो आज भारत में विधर्मियों की इतनी संख्या कभी न होनी। (मलिनता का भाव छिपाने में कुछ-कुछ सफल हुए हैं, इसलिए ज्योतिप्रसाद बराबर समर्थन-सूचक स्मित हिलाए जा रहे हैं।) आज हमारे अनाथ बच्चों की जैसा दुर्दशा हो रही है, उसे देखकर हिमाहिन्दू वा छद्मी कट न जायगो? किमका हृदय हाहाकार न कर उठेगा? किमका "

बिहारीलाल ने कब अपनी मूर्ख समझ का, ज्योतिप्रसाद को इसका हास नहीं । ऐसा सब स्तर पर नींद भूल जाता है, जैसे ही बिहारीलाल की भाषा का अवाक बनने पर कुछ हास आता है। इस भाषा के अन्त में एक बात है—किसी कल मसक ?

कमर इस एक से निकालेगा। दूर में देखा, और चिल्लाये लगा—बाबा, मेरे बच्चों की रीर... बुद्ध देना... ।

इस बार टेढ़ में परिवर्तन कर दिया, क्योंकि एक पैने में ज्यादा की आशा और अभिलाषा भी ।

हृदयमनराय एक-एक पद रगते आगे बढ़े । माथे की स्त्री में मालूम होता था कि किसी गहरी चिन्ता में हैं । ऐसा जान पड़ता था कि किसी ने उन्हें छेड़ा, तो बरस ही पड़ेगे । पर रमजू को इतनी बुद्धि होनी, तो भीस्य क्यों मागता ? उसे तो बस एक पैने में ज्यादा की धुन थी । उनका एक-एक कदम पक्का था, और उमक दिल पर जैसे चोट पड़नी थी । हर एक कदम पर या हर एक चोट पर आवाज भी न निकली जाती थी ।

सामने आने में तीन पद की दूर थी । रमजू गला काड़कर चिल्लाया—बाबा, मेरे बच्चों की रीर... ।

हो पड़ रहा गण । रमजू आगे सरक गया । आवाज फिर निकली—बाबा, मेरे बच्चों... ।

एक ही पद रह गया था । रमजू की आंखें निकल आईं । पूरा आर लगाकर बोला—बाबा नर

हृदयमनराय हाँक सामने आ गया । उसकी नजर में एक बाल भीमन रूप 'नन्दा' का इन्हा 'बुद्ध' यज्ञला में बनी तरह बाध इन्होंने इन्हें इन्हें गहरा कर की । तो बहन आया पर वो राधा ।

इस 'नन्दा' हृदय के 'नन्दा' अन्तर में 'नन्दा' न बाध...
... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ...
... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ...
... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ... नन्दा ...

कमर हम एक में निहालंगा। दूर में देगा, और चिल्लाते लगा—बाबा, तेरे बघों की खैर... बुझ देना... !

इस बार देर में परिवर्तन कर दिया, क्योंकि एक पैने में ज्यादा की आशा और अभिलाषा थी।

हुकुमतराय एक-एक पद रखते आगे बढ़े ! माथे की त्योंरी से मालूम होता था कि किसी गहरी चिन्ता में हैं। ऐसा जान पड़ता था कि किसी ने उन्हें छेड़ा, तो बरस ही पड़ेंगे। पर रमजू को इतनी बुद्धि होती, तो भीख क्यों मांगता ? उसे तो बस एक पैसे से ज्यादा की धुन थी। उनका एक-एक कदम पड़ता था, और उसके दिल पर जैसे चोट पड़ती थी। हर एक कदम पर या हर एक चोट पर आवाज भी तेज होती जाती थी।

सामने आने में तीन पद की देर थी। रमजू गला फाड़कर चिल्लाया—बाबा, तेरे बघों की खैर...

दो पद रह गए। रमजू आगे सरक गया। आवाज फिर झिझली—बाबा, तेरे बघों...

एक ही पद रह गया था। रमजू की आँखें निकल आईं। पूरा खोर लगाकर बोला—बाबा, तेरे

हुकुमतराय ठीक सामने आ गये। उड़नी नजर से एक बार चीखते हुए भिखारी को देखा। विचार-भ्रमला में घुरी तरह घाघ हालतेवाले उस गरीब पर क्रोध तो बहुत आया, पर पी गये।

वह पिया हुआ क्रोध मानो अभाग भिखारी ने वाह उगलवा लिया। क्या किया ? जब हुकुमतराय ने आगे कद रक्खा, तो आवेग में भरकर उभर उभरा पर पकड़ लिया मुँह से बोला—बाबा, तेरे...

हुकुमतराय गिरने गिरने बचे। वह पिया हुआ क्रोध वाप

जब अधिक भीड़ इकट्ठी होनी देखी, और क्रोध का लामा स्पन्दन हो चुका, तो रायसाहब आगे बढ़े ।

चिल्लाते हुए समूह की तरफ किमी का ध्यान न था । सब-के-सब आश्रय की मूर्ति बने, सहमे-मे, आत्मिक पूर्ण रायसाहब को निहार रहे थे । रामचन्द्र से गया गया गेटनेवाला और उद्योतप्रसाद की किवड़ी मजिं वाला मम्माजी भी चुपचाप भीड़ में खड़ा था ।

पर धीरे-धीरे दूर रह गया था । किमी ने आवाज दी । रायसाहब —

रायसाहब ने पीछे फिरकर देखा—अनायास का डेपु-टेन्स ' आवाज बनवाला अग्राज्य था । रायसाहब से भी कमका मतारण बरिचय था । उम्मी बल के आधार पर जमाने आवाज दी था

रायसाहब सम गले । दण्डमान के संग गर्दन मुकाये, अदर कचरनों की मीजन का दटाकने हुए आगे बढ़े । एक के हाथ से दैव बिल ध, दूसरे ने समादपुके ले रकमी थी, तीसरे के चार देहा और दानशनपुक था । जगजग माली हाथ था ।

सम दम दमकर रायसाहब ने बहुत कुछ अनुमान कर लिया । मम्माजी को पूरा तरह स्पष्ट नहीं हुआ था । यह नव हमन की नैजम दम का गीत से बल पड़ गले । फिर भी सध रहे ।

दण्डमान सम आया । सब ने हाथ जोड़कर आभिवन्दन किया । मान के गीत नव कव 'बल' ही रायसाहब ने मिला हुआकर से नव नव क मल 'मल' । दण्ड नव दण्ड नव हुआ ।

दण्डमान नव नव क मल 'मल' । दण्ड नव दण्ड नव हुआ । रायसाहब नव नव क मल 'मल' । दण्ड नव दण्ड नव हुआ ।

जब अधिक भीड़ इकट्ठी होती देखी, और क्रोध का सामा-
म्वलन हो चुका, तो रायसाहब आगे बढ़े ।

बिलावते हुए रामजू की तरफ किमी का ध्यान न था । मय-
के-मय आश्चर्य की मूर्ति बने, सहमे-मे, आर्तक-पूर्ण रायसाहब
को निहार रहे थे । रामचन्द्र से मवा रुपया गँठनेवाला और
उद्योतप्रसाद की झिड़की खाने वाला मन्थासी भी चुपचाप भीड़
में खड़ा था ।

पर थोड़ी दूर रह गया था । किमी ने आवाज दी ।
रायसाहब ...

रायसाहब ने पीछे फिरकर देखा—अनायास्रम का डेपु-
टेशन । आवाज देनेवाला जगन्नाथ था । रायसाहब से भी
उमका माधारण परिचय था । उमी बल के आधार पर उमने
आवाज दी थी ।

रायसाहब धम गण । डेपुटेशन के लोग गर्दन मुकाये,
बहर के बुरतों की भीड़ को टटोलते हुए आगे बढ़े । एक के
हाथ में हँस बिल थे, दूसरे ने रमीदयुक्त से रक्खी थी, तीसरे के
पाम धैली और होनगनयुक्त थी । जगन्नाथ साली हाथ था ।

राम दग देखकर रायसाहब ने बहुत कुछ अनुमान कर लिया ।
मुम्मा अनायास्रम जगत नहीं हुआ था । यह नये हमसे की
नयाग दम ना योग में बल पड़ गण । फिर भी धमे रहे ।

डेपुटेशन राम आया । मय ने हाथ जोड़कर अभिवादन
किया । मय के लिए नष्ट किये बिना ही रायसाहब ने मिर
हलकर अनायास्रम का उल्लेख दिया । डेपुटेशन कुछ शक्ति हुआ ।

आपका मित्रास तो अच्छा है ?
रायसाहब ने कहा—आपका मित्रास तो अच्छा है ?

